www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

नवंबर 2011

बाल दिवस पर विशेष

तिलक धारण का रहस्य

नारी समय को पहचाने

आसक्ति संसार में और भक्ति भगवान की

व्यापक दृष्टि चाहिए जीवन के प्रति

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

—: SPECIALISTS IN :—

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 2 अंक : 10

नवंबर 2011, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
मनीष जैन
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

डिजाइन
महेन्द्र बोरा
(9910406059)

सलाहकार मंडल
दीपक रथ, दीपक जैन-भायंदर,
अशोक एस. कोठारी, दिनेश बी. मेहता,
निकेश एम. जैन, कुशराज बी. जैन,
नवीन एस. जैन, श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
बिन्दू राय सोनी,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलौर,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797, 011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अर्पाटमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

पुण्य क्या? पाप क्या?

पुण्य और पाप ये दो ऐसे शब्द हैं जिनका प्रयोग हम दैनंदिन कितनी बार करते रहते हैं। आस्तिक दर्शन में पुण्य-पाप की जो अवधारणा है वह अपने आप में मौलिक व वास्तविक है। शुभस्य पुण्यं, अशुभस्य पापं। शुभ पुण्य है और अशुभ पाप है। अशुभ का परिहार करना और शुभ को स्वीकार करना– ये नैतिक, धार्मिक जीवन की बुनियाद हैं। –गणि राजेन्द्र विजय

6	संसार के महापुरुष	वल्लभ उवाच
6	अज्ञान का कारण आसक्ति	आचार्य सुदर्शनजी महाराज
8	आसक्ति संसार में और भक्ति भगवान की	श्री कृपालु महाराज
8	इंसान बनो	उमा पाठक
9	रामचरितमानस व्यक्ति चरित्र नहीं, समष्टि चरित्र है	अलका पाण्डेय
10	ओम् की गहराइयां	अमृत साधना
11	तिलक धारण का रहस्य	सिद्धार्थ कुमार शर्मा
12	वृक्ष हमारे सौभाग्य के सूचक हैं	डॉ. रामसिंह यादव
13	प्रथम विश्वगुरु भारत	डॉ. हौसिला प्रसाद पांडे
14	ईश्वर के अगोचर होने का अर्थ	श्री भक्तिवल्लभ तीर्थ महाराज
14	गर्व चूर्ण	शिवचरण मंत्री
15	पवित्री 'कुशा' की महिमा अपार	डॉ. कल्याण प्रसाद वर्मा
16	साधु-समाधि सुधा-साधन	आचार्य श्री विद्यासागर
17	विवाह का आदर्श	आचार्य श्री चंदन मुनि
18	अपसभ्यता के विरुद्ध आंदोलन जरूरी	डॉ. त्रिभुवन चतुर्वेदी
19	सिद्धांत और उनकी अनुपालना	प्रो. महेन्द्र रायजादा
20	अपने साथ भी अपाइन्टमेंट लें	जनार्दन शर्मा
21	आस्था: स्थूल से सूक्ष्म तक पहुंचने का मार्ग	प्रो. मिथिलेश दीक्षित
22	जीवन का परिष्कार करते उदार विचार	साध्वी अणिमाश्री
23	न्यूमरोलॉजी में नंबर-9 का महत्व	नीता बोकाड़िया
23	व्यापक दृष्टि चाहिए जीवन के प्रति	राजीव मिश्र
26	चमत्कारी एवं संकटमोचक है नाकोड़ा तीर्थ	महोपाध्याय ललितप्रभ सागर
27	रामायण में आध्यात्मिक चेतना	आचार्य डॉ. चन्द्रभूषण मिश्र
28	नारी समय को पहचाने	मंजुला जैन
29	अध्यात्म का मार्ग है प्रेम का	आचार्य विजय नित्यानंद सूरि
30	मानवता की आधारशिला	डॉ. प्रीति जैन
31	लाभदायक है खुलकर हंसना	सुप्रिया
32	सर्वोत्तम आहार शाकाहार	पुष्पेन्द्र मुनि
33	सफल जीवन के सूत्र: शांति और शक्ति	आचार्य महाश्रमण
34	सबके बीच से निकलता है खुशी का रास्ता	विपिन जैन
35	मंत्र साधना कैसे करें?	मुनि यशवंत कुमार
36	पारिवारिक शांति और समाधि का विकास	मुनि राकेश कुमार
37	दाम्पत्य में बात का बनता बतंगड़	किरण बाला
37	मंत्रों द्वारा रोग चिकित्सा	अनोखीलाल कोठारी
38	बड़े चमत्कारी हैं थंका चित्र	पुखराज सेठिया
39	उस बच्ची ने दी सीख	दिलीप भाटिया
40	The inner perfection	Sri Sri Ravi Shankar
40	Nature of spirituality	Ramnath Narayanswami
41	Tolerance is hallmark of being religious	Acharya Mahaprajna
41	What you see or don't see	Shri Shri Anandamurti
42	बाल मन की गहराइयां	सरोज छाजेड़
45	ज्योतिषीय टोटके और उपाय	चंदू बी. सोलंकी
45	जानिए चन्द्र ग्रह को	मुरली कांठेड़
46	ध्यान है सुखद जीवन की यात्रा	मनीष जैन

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार सितम्बर-2011 अंक मिला। यह संपूर्ण मानव समाज के हित की साहित्य सामग्री लेकर पाठकों के निकट पहुंच रही है, सुधी पाठक विविध विषयों की ज्ञान सामग्री से लाभान्वित होंगे। आकर्षक दर्शन, प्रिय कलेवर, विशुद्ध मुद्रण- वाह मज़ा आ गया।

–डॉ. बी. पी. दुबे
होटल संगम के सामने, चौराहा
5, सिविल लाइंस, सागर-470001 (म.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार सितम्बर-2011 अंक मिला। आज के प्रदूषित भौतिकवादी वातावरण में इस प्रकार के चिंतन और साहित्य की बहुत आवश्यकता है। आपका बहुत बड़ा महनीय और उपयोगी अनुष्ठान है यह। यह आत्मा का भोजन है। यदि कहीं पर कुछ भी व्यक्तियों तक, यह पत्रिका पहुंचेगी तो अवश्य ही आगे बढ़ने का, उन्नति करने का मार्ग प्रशस्त होगा। बड़े दु:ख की बात है कि आजकल सस्ते प्रचार-प्रसार को बढ़ावा मिल रहा है। आपकी पत्रिका मानवता के लिए बड़ा कार्य कर रही है।

–डॉ. मिथिलेश दीक्षित
जी-91-सी, संजय गांधी पुरम
लखनऊ-226016 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का अंक-8 मुझे चतुर्मास पर्युषण पर्व के शुभ अवसर पर क्षमापना महापर्व के प्रसाद रूप में प्राप्त हुआ। इसके पूर्व विद्वानों के मुख से इस सारगर्भित पत्रिका की चर्चा सुनी थी। संस्कार, साहित्य, इतिहास, व्यवहार, शास्त्र और संत वचनों से मंडित इस हिरण्यगर्भ पत्रिका के प्रकाशन हेतु बार-बार बधाई। आपने समाज के महत्वपूर्ण पहलुओं को समझते हुए यह सिद्ध कर दिया है कि समृद्ध और सुखी परिवार का रास्ता इसी से होकर जाता है।

आचार्य विजयानन्द सूरि का पाथेय, संदीप कुमार का कर्मकाण्ड, डॉ. गार्गीशरण मिश्र मराल का कर्मकाण्ड एवं संन्यास, मंजुला जैन का प्राकृतिक चिकित्सा, माला वर्मा का मौन, आचार्य महाश्रमण का स्वाद विजय आदि परिवारगत सुख और समृद्धि के साथ-साथ समाजगत एवं देशगत परिवार में समृद्ध और सुख लाने के लिए पर्याप्त हैं।

यह पत्रिका मात्र पत्रिका निकालने हेतु प्रकाशित नहीं होती है बल्कि जीवन के गूढ़तम तत्वों को सरलतम शैली में वितरित करने का सफल प्रयास है। वर्तमान युग के जितने भी सुधी विचारक हैं सबके भाव समृद्ध और सुखी परिवार बनाने का ही है। इस पत्रिका को पढ़कर अध्ययन की संपूर्णता का आभास सहज ही हो जाता है। संपदान कला की दक्षता हेतु पुन: बधाई।

–आचार्य डॉ. चंद्रभूषण मिश्र
परमहंस निवास, द्वारा लकी बिस्कुट कंपनी
हाजीगंज, पटना सिटी-800008

समृद्ध सुखी परिवार सितम्बर-2011 अंक का मैंने अध्ययन किया है। जीवन का सर्वांगीण विकास व चारित्रिक उत्थान हेतु आपने बड़े ही सुंदर व सारगर्भित शब्दों में इस मासिक पत्रिका में गद्य व पद्य के रूप में वर्णन किया है। मैं पूरा आश्वस्त होकर कह सकता हूं कि साहित्य जगत में इस अमूल्य कृति को सराहनीय स्वीकृति प्राप्त हुई है व आगे भी जारी रहेगी। 'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका को अध्ययन कर जिज्ञासु पाठक एवं जागरूक नई पीढ़ी पर्याप्त ज्ञानार्जन कर गौरवान्वित होंगे।

मनुष्य की सच्ची संपत्ति है श्रद्धा रचित डॉ. रामसिंह यादव का अवलोकन करने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ। इसके अंतर्गत श्रद्धा शब्द का भावार्थ व महत्व की परिपूर्ण ज्ञान की जानकारी सारगर्भित दृष्टिकोण से पाठकों को दी गई।

–रामस्वरूप झंवर
'रूपयश' 9-10 शास्त्रीनगर विस्तार
मिलन मार्बल्स के नजदीक
भीलवाड़ा-311001 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका नियमित प्राप्त हो रही है। यह मासिक पत्रिका बहुआयामी एवं अमूल्य सामग्री से सुसज्जित रहती है। संपादकीय सामयिक, मौलिक एवं पठनीय होती है। श्रद्धेय गणि राजेन्द्र विजयजी के अमूल्य विचार एवं वल्लभ उवाच अप्रतिम होते हैं। अन्य सामग्री भी विचारोत्तेजक होती है। पत्रिका की छपाई निर्दोष होती है। पत्रिका के लिए मेरी अनंत शुभकामनाएं।

–प्रो. महेन्द्र रायजादा
5-ख-20, जवाहर नगर, जयपुर (राज.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का सितम्बर-2011 अंक भी पूर्वांकों की भांति ज्ञानवर्द्धक, आनन्दवर्द्धक एवं प्रेरणाप्रद है। संत पुरुषों एवं मनीषियों के शब्द-सुमनों की सुरभि से हृदय आनन्दित हुआ। आपकी समसामयिक/संदर्भों से जुड़ी संपादकीय एवं परम श्रद्धेय मुनि तरुणसागरजी के सारगर्भित शब्दों ने विशेष रूप से प्रभावित किया। राजेन्द्र तिवारी की गजल और सीताराम गुप्ता की कविता बहुत पसंद आयी।

वैसे अंक के सारे आलेख एवं काव्य रचनाएं अपने आप में बेमिसाल है। पत्रिका का सर्वांगीण विकास कर आप जनहित की भावना से जो पावन भावयज्ञ कर रहे हैं, वह स्तुत्य है, नमन् करने योग्य है।

–राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'
ग्राम-फत्तेपुर, पो. बेनीकामा
जिला-रायबरेली (उत्तर प्रदेश)

समृद्ध सुखी परिवार का अगस्त अंक हस्तगत हुआ। एतदर्थ हार्दिक धन्यवाद। साज-सज्जा एवं सामग्री की दृष्टि से पत्रिका उत्कृष्ट है। आपका संपादकत्व पृष्ठ-पृष्ठ पर झलकता है। ऐसी पत्रिकाएं ही समाज व देश का निर्माण करती है।

–रमेशचंद्र शर्मा चंद्र
डी-4, उदय हाउसिंग सोसायटी
बैजलपुर, अहमदाबाद-380015 (गुजरात)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का सितम्बर-2011 अंक मिला। अनंत आभार। पत्रिका भारतीय संस्कृति की सच्ची संवाहक है। प्राय: सभी रचनाएं मूल्यों को पोषण दे रही हैं। सामग्री व सभी वर्गों के लिए उपयोगी है। पठनीय सामग्री रोचक से समृद्ध इस पत्रिका के लिए आपको अनंत बधाइयां।

-अशोक 'अंजुम'
संपादक : 'अभिनव प्रयास'
615, ट्रक गेट, कासिमपुर
पा.हा. अलीगढ़-202127 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का सितम्बर-2011 का भ्रष्टाचार पर संपादकीय परिपक्व, सटीक एवं सामयिक राष्ट्रीय सोच पर बेबाक हस्ताक्षर है। बधाई। मैं शत-प्रतिशत सहमत हूं। पत्रिका में नित नया निखार, विविधता, उच्चस्तर एवं हर पक्ष को लुभाने वाला आकर्षण आध्यात्मिक तथा नैतिक अग्रणी सोच की मशाल है।

–जनार्दन शर्मा, एडवोकेट
सत्य सदन, पुष्कर (राजस्थान)

संपादकीय

आओ! हम सच्चे भारतीय बनें

जब रास्तें धुंधलें हों और दिशाओं का स्पष्ट ज्ञान न हो, तो कभी-कभी लीक से हटकर भी सोचना चाहिए। आज देश कितनी ही कंटीली झाड़ियों में फँसा पड़ा है। क्या जनता की बुनियादी समस्याओं का हल एवं उसकी खुशहाली का रास्ता संसदीय गलियारों से होकर ही जाता है? प्रतिदिन आभास होता है कि अगर इन कांटों के बीच कोई पगडण्डी नहीं निकली तो लोकतंत्र का चलना दूभर हो जाएगा। राजनीतिक विसंगतियों एवं स्वार्थों के चलते क्या लोकतंत्र को निस्तेज होने दिया जा सकता है? लोकतंत्र की मजबूती के लिये राजनीति का गंगा स्नान जरूरी है लेकिन यह स्नान किसी रथयात्रा, जनचेतना, करोडों-अरबों की दिखावटी योजनाओं को लोकार्पित करने से नहीं होने वाला है।

एक सदी पहले जर्मन समाजशास्त्री मैक्स बेबर ने सत्ता को तीन भागों में बांटा था। पारम्परिक, करिश्माई और कानूनी नौकरशाह। आजकल करिश्माई नेतृत्व पसन्द किया जाता है। करिश्मा भी केवल वोट बटोरने का ही देखा जाता है, उसकी योग्यता एवं देशहित की भावना भले धुंधली हो और भले ही वह नेतृत्व समूची व्यवस्था को धुंधला दें। फिर लोगों को हम क्यों शक्तिशाली बनाते हैं?

अब्राहम लिंकन ने कहा है, लगभग सभी व्यक्ति विपत्ति का सामना कर सकते हैं, लेकिन यदि किसी इंसान के चरित्र को जांचना हो तो उसे शक्ति दे दीजिए। राजनीति भी अपने साथ ऐसी ही ताकतें लेकर आती है। हालांकि कानूनी रूप से ये शक्तियां जिंदगी को सहज बनाने के लिए दी जाती हैं, लेकिन ताकत का अपना एक नशा होता है, जो मूल उद्देश्य को द्वितीयक बना देता है। शक्ति के साथ सत्ता का उपभोग उसी नशे को आमंत्रित करता है और भ्रष्टाचार या अनैतिकता के रास्ते खुलते हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में शक्ति-संपन्न अनीतियों को अपनाते हैं। शक्तिशाली और अच्छे के संयोजन की मिसालें इक्की-दुक्की होती हैं? तो आखिर अभ्रष्ट रहने का तरीका क्या है? या फिर शक्ति को नीति के साथ कैसे चलाया जाए? मुझे जो सीधा रास्ता समझ आता है वह है कि जमीन पर अपने पैर टिकाए रखने के लिए सतर्क प्रयास, कोई भी नेक शुरूआत स्वयं से करने का साहस और अधिक प्रतिबिम्बित होने की इच्छा चाहिए। शेष सब सफल और नेक होता है। बराक ओबामा कहते हैं, एक साधारण सीट पर बैठकर मुझे ज्यादा विचार मिलते हैं, बजाय कि किसी विशिष्ट कुर्सी पर आसीन होने की तुलना में। निवेशक वॉरेन बफेट आज भी कुछ हजार डॉलर के घर में निवास करते हैं और अपने उन्हीं पुराने दोस्तों के साथ ब्रिज खेलते हैं। जॉन कैनेडी और रोनाल्ड रीगन अपने ऊपर हंसने में महारती थे। राजनीति आपको अनीतियां नहीं सिखाती बल्कि आपको नीतियों को घुमा-फिराकर इस्तेमाल करना होता है। उद्देश्य के इरादे को नैतिक या अनैतिक बनाना आपके हाथ में होता है। आज राजनीति का अर्थ छल प्रपंच, कूटनीतियां और भ्रष्टाचार है लेकिन वास्तविकता यही है कि ईश्वर ने तो इस प्रक्रिया को इस उद्देश्य के साथ नहीं रचा था, हम इंसानों ने उसके मूलस्वरूप को बदल दिया।

लोकतंत्र में जनता की आवाज की ठेकेदारी राजनैतिक दलों ने ले रखी है, पर ईमानदारी से यह दायित्व कोई भी दल सही रूप में नहीं निभा रहा है। 'सारे ही दल एक जैसे हैं' यह सुगबुगाहट जनता के बीच बिना कान लगाए भी स्पष्ट सुनाई देती है। सभी दल राजनीति नहीं, स्वार्थ नीति चला रहे हैं। एक ओर भाजपा के केन्द्रीय नेता येदियुरप्पा से दूरी दिखाने का दिखावा करते हैं तो दूसरी ओर कनार्टक के मुख्यमंत्री सदानंद गौड़ा सहित राज्य के तमाम पार्टी नेता अब भी येदियुरप्पा के साथ खड़े नजर आ रहे हैं। इसमें कोई हैरत की बात नहीं है। सियासी मुसीबत के चलते येदियुरप्पा भले मुख्यमंत्री पद से हटा दिए गए, मगर उनकी मर्जी से ही उनका उत्तराधिकारी तय किया गया। जो पार्टी एक दागी नेता का इतना ख्याल रखती हो, वह भला किस मुंह से भ्रष्टाचार से लड़ने का दावा कर सकती है?

सरकार संचालन में जो खुलापन व सहजता होनी चाहिए, वह गायब है। सहजता भी सहजता से नहीं आती। पारदर्शिता का दावा करने वाले सत्ता की कुर्सी पर बैठते ही चालबाजियों का पर्दा डाल लेते हैं। पर एक बात सदैव सत्य बनी हुई है कि कोई पाप, कोई जुर्म व कोई गलती छुपती नहीं। वह रूस जैसे लोहे के पर्दे को काटकर भी बाहर निकल आती है। वह चीन की दीवार को भी फाँद लेती है। हमारे साउथ ब्लाकों एवं नॉर्थ ब्लाकों में तो बहुत दरवाजे और खिड़कियाँ हैं।

लोकतंत्र के सूरज को घोटालों और भ्रष्टाचार के बादलों ने घेर रखा है। हमें किरण-किरण जोड़कर नया सूरज बनाना होगा। छोटे-छोटे सुख हासिल करने की इच्छा के चलते हम कई बार पूरे माहौल को प्रभावित करते हैं, दूषित बना देते हैं। यह बात एकदम सही है कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, लेकिन समूह में अपरिमित शक्ति होती है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध सामूहिक प्रतिरोध से इस बुराई का खात्मा हो सकता है। वैसे, सबसे पहले जरूरी है कि हम स्वयं भ्रष्ट न होने का संकल्प लें। लोग व्यंग्यात्मक लहजे में कहते हैं- अमुक व्यक्ति इसलिए ईमानदार है, क्योंकि उसे बेईमानी का मौका नहीं मिला। इसी तरह थोड़ा-सा समय बचाने के लिए हम रिश्वत देने को तैयार हो जाते हैं। इस तरह के भ्रष्टाचार से हमें ही लड़ना होगा। लोकशाही को जीवन्त करने के लिए हमें संघर्ष की फिर नई शुरूआत करनी पड़ेगी। मैं इसे यूं कहूंगा कि भारतीय होने में जितनी भी खामी है, वह एक तरह का भटकाव है और हमेशा ही हमारे यहां सकारात्मक धारा मौजूद रही है, जो आत्मनिर्भर, लोकतांत्रिक स्वाभिमानी और समतामूलक भारतीयता के निर्माण के लिए प्रयासरत रही है। उसी धारा की बदौलत आपको कई भारतीय मिल जायेंगे, जो मानवीय जीवन का आदर्श स्थापित कर रहे हैं। असल में भारतीय होने का मतलब है, ऐसा इंसान, जो किसी और की नकल नहीं, अपने विवेक और श्रम से सतत आगे बढ़ने की कोशिश कर रहा है। जिसके मन में परिवार, पड़ोस, समाज और देश सहित पूरी मानवता के लिए प्रेम है। आओ! हम सच्चे भारतीय बनें।

लोकतंत्र में जनता की आवाज की ठेकेदारी राजनैतिक दलों ने ले रखी है, पर ईमानदारी से यह दायित्व कोई भी दल सही रूप में नहीं निभा रहा है। 'सारे ही दल एक जैसे हैं' यह सुगबुगाहट जनता के बीच बिना कान लगाए भी स्पष्ट सुनाई देती है। सभी दल राजनीति नहीं, स्वार्थ नीति चला रहे हैं।

वल्लभ उवाच

संसार के महापुरुष

कौन थे सब? वही जो आप हैं, परन्तु उनकी महानता का कारण क्याथा? समझने की कोशिश करोगे, तो ही समझ सकोगे, तुम उन्हें महापुरुष क्यों गिनते हो?

अवश्य इन्होंने हमसे कुछ अधिक अनुभूति प्राप्त की होगी। हम में रही त्रुटियों का अवलोकन करवाया होगा, हमें।

उन्होंने भी साधारण रूप से जन्म लिया होगा, बाल्यावस्था, यौवन, वृद्धावस्था का समय बिताया होगा, परन्तु इस विश्व की कर्मभूमि में जो कुछ किया उससे वे अमर हो गए और हम उनको महान गिनते हैं।

संसार में असंभव कुछ नहीं।

जीवन स्वयं संघर्ष है–वीरता पूर्वक सामना करो।

प्राणिमात्र को अपना रूप समझो।

दूसरों के लिए आत्म बलिदान वास्तविक त्याग है।

अमरत्व त्याग से मिलता है।

बाती जलती है, तेल जलता है, प्रकाश फैलता है।

यही जीवन है।

जीना सीखो।

जीवन देना सीखो,

सारा ब्राह्माण्ड जीवन पर आधारित है।

जो जीवन बचा नहीं सकते, उन्हें जीवन लेने का अधिकर नहीं।

यही जीवन का गुरुमंत्र है।

मानव मात्र का कल्याण करना ही, जीवन का वास्तविक आनन्द है।

सृष्टि क्या है, जीव अजीव का पुंज, एक दूसरे पर आधारित इस जीवन का वास्तविक अर्थ है दया, अनुकम्पा, प्रेम, सद्भावना और अहिंसा।

''सम्यग्-ज्ञान-दर्शन-चारित्र'' जीवन के रत्नत्रय हैं। इनका मूल्य कोई आंक नहीं पाया तुम उन्हें पाने का प्रयत्न करो।

अपनी आत्मा की ज्योति जगाओ, एक दीपक सारे अंधेरे को भगा देता है। फिर भी दीप से दूसरे दीप जलते हैं, सारा विश्व प्रकाशमान हो जाएगा।

प्राणिमात्र से प्रेम करो, सबसे प्रेम करो, प्रेम से बड़ी तपस्या क्या होगी?

सदा आंखें खोल कर चलो, सत्य दृष्टि से मिलता है। किसी अशुभ को मत देखों, यह विकार पैदा करेगा, विकार पतन का मार्ग है।

''सबको समझने का प्रयत्न करो'' परन्तु सबसे पहले अपने आपको समझो जब तुम अपने आपको नहीं समझे दूसरों को क्या समझोगे?

धर्म तो मानव कल्याण का मार्ग है इस मार्ग पर चलने वाला कम से कम पथभ्रष्ट तो नहीं होता?

जिसका अपना जीवन धार्मिक, मौलिक और सिद्धांतों की डोरी से बंधा है वह दूसरों का बुरा सोचेगा ही क्यों?

दूसरों पर दृष्टि वही डालते हैं जिनकी आंखों में दृष्टिभ्रम होता है।

जीव दया एक श्रेष्ठ धर्म है।

अहिंसा परम धर्म है।

परिग्रह रूपी जीवन सात्विक सदाचार का गुरुमंत्र है।

किसी भी वस्तु के अनेकान्त रूपों का नवनीत देखो उसके सत्य को पकड़ो।

लक्ष्य सामने खड़ा होगा।

'मैं' शत्रु है मानवता का, इसे हटा दो, फिर देखो–'तुम' ही तुम दीखेगा क्योंकि अहंकाररहित मानव के लिए सारी सृष्टि एक रूप हो जाती है। ■

अज्ञान का कारण आसक्ति

आचार्य सुदर्शनजी महाराज

सामाजिक प्राणी होने के नाते हर मनुष्य इस दुनिया से बंधा है। दुनिया की दुकानदारी ने उसे इस कदर उलझा रखा है कि वह इससे निकलने की बात तो दूर इस संदर्भ में सोच भी नहीं सकता। क्योंकि वह अपने बंधु-बांधवों से बंधा है, क्योंकि वह रिश्ते की डोर में फंसा है। बस, यही है मायाजाल, दुनिया का झंझावात।

परंतु कई बार उसके प्राणों पर उस समय चोट लगती है, जब कोई ऐसी वस्तु जिसके प्रति उसका मोह होता है- छूट जाए, टूट जाए अथवा खो जाए। उस विशेष वस्तु के प्रति वह आसक्ति उसे हिलाकर रख देती है। मजे की बात यह है कि जब तक आपने कहा- 'मेरी है, मेरी है' तब तक तो दु:ख होगा, जैसे ही समझ में आ गया कि यह वस्तु मेरी नहीं है, तो दुख होगा ही नहीं। मेरे मन का यह भाव ही आसक्ति है, यही बंधन है। परंतु जो कर्म मनुष्य निष्काम भाव से करता है, वे बंधन का कारण नहीं बनते। भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में निष्काम कर्म को श्रेष्ठ दर्जा दिया है।

यदि व्यक्ति घर-गृहस्थी में रहते हुए भी ममता से ऊपर है, यदि संसार में रहकर भी उसने इसे छोड़ रखा है, तिलांजलि दे रखी है, तो समझे कि उसके पद परम की ओर अग्रसर हैं। यदि ऐसी स्थिति आ गयी तो समझो कि हम उस अखंड ज्योति के अखंड अमृतमय कोष के निकट पहुंच गए। जिसे पाकर फिर रोना नहीं पड़ता, दुखी नहीं होना पड़ता और न ही तड़पना पड़ता है। फिर तो लगातार उस आनंद की ओर बढ़ चलेंगे, जिसकी प्राप्ति हमें हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिये।

वस्तुत: आनंद से ही मानव मात्र की उत्पत्ति हुई है। मनुष्य यदि थोड़ा सतर्क और जागरूक हो जाय, तो चौरासी लाख के योनियों से भवबंधन को पार कर मुक्त हो सकता है। जीवन की सार्थकता और सफलता भी यही है। यदि व्यक्ति विवेकवान और विचारशील है, तो वह अवश्य ही परम पद की प्राप्ति करता है। जीव का यदि लक्ष्य बन जाय, मोक्ष की प्राप्ति, निर्वाण की प्राप्ति और उस तरफ बढ़ने का थोड़ा सा प्रयास करे, तो निश्चित ही सुख और आनंद की अनुभूति उसके जीवन में आते देर नहीं लगेगी। 'चल हंसा उस पार' यही तो निर्वाण है। ■

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध है:
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

दिशाबोध

गणि राजेन्द्र विजय

पुण्य क्या ? पाप क्या ?

अनादिकाल से मनुष्य सुख-दु:ख मिश्रित जीवन जी रहा है। हमारा सुख-दु:ख हमारे पुण्य-पाप का परिणाम है तथापि काल भी उन पर प्रभाव डालता है। पंचम आरे का नाम ही दु:खमा है। सारे पाप और दु:खमा आरा दोनों मिलते हैं तो दु:ख स्कवायर (चौकोर) हो जाता है। जब हम पापाचरण करते हैं तो स्वयं के साथ-साथ परिवार, समाज, मित्रादि के लिए भी दु:खमा बन जाते हैं।

हम चाहते हैं कि जिधर दृष्टि घुमाएं उधर सुकून की बहार आ जाए। जिससे बात करें उससे स्नेह-संबंध प्रगाढ़ हो जाएं। जहां पैर रखें वहां समृद्धि के निधान खुल जाएं, जिस कार्य को हाथ में लें वह 'कल्पतरू' सम फलता एवं फूलता चला जाए। जहां निवास करें वहां हित, सुख, आरोग्य, प्रेम, स्नेह के अमृत झरने बह चलें। मगर ऐसा संभव तभी है जब जीवन में अधिकाधिक पुण्य का आचरण हो।

पुण्य और पाप ये दो ऐसे शब्द हैं जिनका प्रयोग हम दैनंदिन कितनी बार करते रहते हैं। आस्तिक दर्शन में पुण्य-पाप की जो अवधारणा है वह अपने आप में मौलिक व वास्तविक है। शुभस्य पुण्यं, अशुभस्य पापं। शुभ जो है वह पुण्य है और अशुभ को पाप कहा गया। विचार, वचन, वर्तन और व्यवहार ये सभी शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के होते हैं। अशुभ का परिहार करना और शुभ को स्वीकार करना– ये नैतिक, धार्मिक जीवन की बुनियाद है। जब जीवन-व्यवहार में अशुभताएं बढ़ती जाती हैं तो जीवन अमंगल और जगत् अमंगल का रूप देखा जाता है। इन अमंगलों का निवारण मात्र शुभ के समाचरण में निहित है।

जैन दर्शन में कर्म को प्रधान रूप से माना गया है। प्रभु महावीर फरमाते हैं- 'सुचिण्णा कम्मा सुचिण्ण फला हवन्ति, दुचिण्णा कम्मा दुचिण्ण फला हवन्ति'–अर्थात् शुभ कर्म अच्छा फल देने वाले होते हैं और अशुभ कर्म बुरा फल देते हैं। अगर अच्छा फल चाहते हो तो अच्छे कर्म करो और बुरा फल नहीं चाहते हो तो पाप कर्म से बचो। इस उपदेश को आत्मसात करते हुए भव्य जीव अधिक तप करके पापकर्मों से बचते हैं और पुण्य का आचरण करते हुए आत्मशुद्धिपरक धर्म का आराधन करते हैं।

पुण्य ही एक ऐसा पावर हाउस है जो जीवन के सारे बल्ब जला देता है। पुण्य साथ है तो अंधेरी राहों में रोशनी के लिए जगह-जगह दीप जल जाते हैं और पुण्य न हो तो जले हुए सारे स्नेह के दीप बुझ जाते हैं और व्यक्ति अपनों के आगे भी भिखारी बनकर भीख मांगता है, सारे अपने सपने बन जाते हैं और सारे सगे दगा दे जाते हैं। अत: जीवन में जहां कहीं भी पीड़ा दु:ख, तड़प, वेदना, अशांति, रोग, शोक, विफलता, अभाव, दारिद्रय है वह सब पुण्य की कमी से है।

संसार में दो तरह के जीव हैं-सिद्ध और संसारी। सिद्ध जीव कृतार्थ है, कृतकृत्य है, उनके सभी प्रयोजन सिद्ध हो चुके हैं, सभी कर्मों का अंत करके मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं अत: उनके जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, रोग नहीं, शोक नहीं, दुख नहीं, दारिद्रय नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, भूख नहीं, तृषा नहीं। जैसे ज्योत में ज्योत समा जाती है वैसे ही सिद्ध आत्मा एक में अनेक विराजमान है। जीवनोपयोगी किसी भी भौतिक उपकरणों की आवश्यकता से वे अतीत हो गए हैं। लेकिन, दूसरे प्रकार के संसारी जीव हैं वे अष्ट कर्मों से बद्ध हैं। कर्मबद्ध आत्माओं में जन्म-मरण, रोग-शोक, भूख-प्यास, शरीर-इन्द्रियां-मन आदि सब हैं। इन जीवों की अपनी-अपनी देह के अनुरूप आहार, स्थान, वस्त्रादि की आवश्यकता रहती है। वैसे देखा जाए तो संसार में सब तरह के स्थान हैं। अत्यधिक पुण्यवान जीवों को अपने रहने के लिए देवलोक में सजे-सजाए विमान मिलते हैं। वहां पर न तो स्थान की कमी है और न ही स्थान का दु:ख।

नरक में स्थान का सुख किंचित नहीं और दु:ख अथाह मिलता है। स्थान की दु:खदायकता भी वहां का बहुत बड़ा दु:ख है जैसे शर्कराप्रभा नारकी का स्थान तलवार एवं धुरी की धार से भी अनंतगुणा अधिक तीखे, नुकीले एवं धारदार पत्थरों से बना है जिस पर सोना, बैठना तो दूर खड़ा रहना भी अनंत दु:खदायी है। मगर बेचारे नैरयिक उस स्थान को छोड़कर जाएं तो कहां जाए। ताउम्र उसी पर चलना, बैठना, सोना, खड़े रहना और सजा भुगतना है।

इसी प्रकार बालुकाप्रभा नारकी में भड़भूजे की भाड़ से भी अधिक उष्ण बालू पूरे क्षेत्र में बिछी है। पंकप्रभा नारकी में खून-मांस का कीचड़ ही कीचड़ भरा है। जैसे सूअर दिन-रात नालियों में कीचड़ में रहता है इसी प्रकार नरयिकों को उसी कीचड़ में अपनी असंख्य वर्षों की आयु बितानी है। धूमप्रभा सेमलखार के धुएं से भी अनंतगुणा खारे धुएं से भरी है और तमप्रभा व तमतमा प्रभाघोर अंधेरी है। स्थान की प्रतिकूलता ही वहां प्रतिपल अनंत दु:ख देती है। वस्त्र के नाम पर एक चिंदी भी तन ढकने को नहीं है। अनंत शीत में निर्वस्त्र ठिठुरते रहते हैं और अनंत उष्णता में आग-सी तपन सताती है। वे सारी उम्र झुलसते एवं ठिठुरते रहते हैं। आहार-पानी एक कवल या एक बूंद भी नहीं मिलता। सारी उम्र भूख के मारे पेट की अंतड़ियां चिपक जाती है, गश खाकर गिरते रहते हैं। पाप के उदय से या तो कुछ मिलता ही नहीं है और मिलता भी है तो विकृत दु:खद पदार्थ मिलता है।

तिर्यंच के पाप का उदय नारकी से कुछ कम मगर मनुष्य से अधिक होता है। उन्हें स्थान तो असीम मिलता है इसका कहीं कोई प्रतिबंध नहीं के समान है मगर उनका जीवन सुरक्षित नहीं है। उन्हें कदम-कदम पर मृत्यु का भय रहता है। बड़े जानवर, छोटे जानवरों को स्थान नहीं देते, भोजन छीन लेते हैं, मांसाहारी पशु निर्बल को मारकर खा जाते हैं। पशु ही पशु की जान के दुश्मन तो होते ही हैं साथ ही मनुष्य भी उन्हें मारकर उनके मांस को भोजन सहित अन्य अनेक कामों में लेते हैं। निर्मम तरीके से उन्हें कत्ल किया जाता है।

नरक में मेहनत कितनी भी कर ले कुछ भी नहीं मिलता और देवगति में बिना मेहनत के इतना मिलता है कि कुछ कहना क्षमता से बाहर है, किसी भी प्रकार की कमी नहीं रहती। जैसा पुण्य वैसा पदार्थ। मेहनत की जरूरत है मनुष्य गति में। ■

● पाथेय ●

श्री कृपालुजी महाराज

आसक्ति संसार में और भक्ति भगवान की

अक्सर लोग प्रश्न करते हैं कि हमारे भारत में भगवान की भक्ति तो बहुत दिखाई पड़ती है, घर-घर में मंदिर हैं। और यहां तो मरने के बाद भी 'राम नाम सत्य है' बोला जाता है। फिर यहां इतना पाप और भ्रष्टाचार क्यों है?

हमारे गुरु लोग जो पूरे देश में मंडरा रहे हैं, आज बाबाजी बन-बन कर लोगों के कान फूंकते जा रहे हैं। चेले बनाते जा रहे हैं लोगों को। असल में उन्होंने ही बिगाड़ा है भक्ति का माहौल। उनको पता नहीं कि भक्ति करनी किसकी है। सब इन्द्रियों से भक्ति करते हैं- आंख से, कान से, रसना से, पैर से, हाथ से। निन्यानवे प्रतिशत लोग इन्द्रियों से भक्ति करते हैं। पूजा हाथ से, दर्शन मंदिर में जाकर। कान से भागवत सुन रहे हैं, मुख से नाम कीर्तन जप रहे हैं। पुस्तक पढ़ते हैं- गीता या गुरु ग्रंथ साहब पाठ करते हैं रसना से। पैरों से चारों धाम की मार्चिंग करते हैं। वैष्णोदेवी जा रहे हैं, कहीं बद्रीनारायण जा रहे हैं- ये सब नाटक करते हैं- हम लोग। ये सब साधना नहीं है। इन्द्रियों द्वारा जो भक्ति की जाती है, भगवान उसको लिखते ही नहीं, नोट नहीं करते, वो तो व्यर्थ की बकवास है, अनावश्यक शारीरिक श्रम है। उपासना या भक्ति या साधना मन को करनी है।

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः।

बन्धन और मोक्ष का कारण मन ही है, हम मन को तो संसार में लगाये हुए हैं। मां, बाप, बेटा, स्त्री, पति, धन, प्रतिष्ठा- इन सब चीजों में मन को लगाये हैं। और मुख से बोलते हैं, 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव।' हे भगवान, तुम्ही हमारी मां हो, पिता हो, धन-संपत्ति हो—ये तो हम और झूठ बोल रहे हैं भगवान से। हृदय पर हाथ रखकर के आप लोग सोचिए कि ये जो जीवन भर साधना करते रहे पूजा-पाठ-जप किए-हमने असल में भगवान के दर्शन के लिए कितने आंसू बहाए?

संसार को पाने के लिए, संसार के वियोग में तो बड़े आंसू निकले। लड़की की शादी है। हां, दस लाख, बीस लाख, पचास लाख भी फूंक दिया उसके पीछे। अच्छा लड़का भी देखा और लड़की को ब्याह दिया। जब जाने लगी तो मां रोने लगी, बाप रोने लगा। क्यों? अरे तुम तो रुपया दे के उसको निकाल रहे हो घर से, तो फिर बात क्या है? रोते क्यों हो? आसक्ति है मन की, अरे वो तो जा रही है ससुराल में, तुम उसको भेज रहे हो पैसा देकर के। तुम्हें तो खुश होना चाहिए। लेकिन मन का अटैचमेंट है। लेकिन भगवान के लिए कभी ऐसा नहीं हुआ, ऐसी रुलाई नहीं फूटी। तो भगवान की उपासना जो हो रही है, वह असल में धोखा है। ये नाम कीर्तन, गुण कीर्तन, लीला कीर्तन तो बच्चों की बातें हैं- जैसे कोई छोटे से बच्चे को कोई पाठ रटावे जबानी। लेकिन तत्वज्ञान जिसको हो, थ्योरी की नॉलिज हो तो उसको पहला सबक ये याद करना है कि मन से भक्ति करनी है। मन से प्यार करो तो उसे सब समझते हैं, पशु-पक्षी भी जानते हैं, मनुष्य को कौन कहे। जैसे मां से, बाप से, बीबी से, पति से, धन से अपने शरीर तक से आप लोग प्यार करते हैं- ऐसे ही तो करना है भगवान से। कोई नया मन नहीं लाना है, कोई नया तरीका नहीं लिखा है शास्त्र-वेद में। सब वेद शास्त्र मैं जानता हूं। कोई नई बात नहीं लिखी कहीं।

जैसे प्यार संसार से करते हैं, ऐसे ही भगवान से करना है। तुम संसार को अपना मानते हो, बस यही गलती है। क्यों अपना मानते हो? अपने को शरीर मान लिया। मैं पुरुष हूं, मैं स्त्री हूं, मैं ब्राह्मण हूं, मैं क्षत्रिय हूं, मैं पंजाबी हूं, मैं बंगाली हूं- पहले ये सब बीमारियां पाल लीं। फिर कहते हो कि भगवान का भक्त हूं, दास हूं। असल में तो भूल गये हैं आप उसको। ■

इंसान बनो

उमा पाठक

सहसा बहुत पहले सुने एक फिल्मी गीत की पंक्ति दिलोदिमाग में हलचल मचाने लगी, 'इंसान बनो कर लो भलाई का कोई काम।' सीधे सरल शब्दों में कही गई यह बात आज के संदर्भ में कितनी गहरी और सही लगती है। आज देश-विदेश सब जगह केवल हिंसा का नाच हो रहा है। आतंकवाद हो या साम्प्रदायिक दंगे- एक ही हिस्से के दो पहलू हैं। दोनों धर्म की दुहाई देते हैं और हिंसा में विश्वास करते हैं।

सभी धर्मों के अनुसार प्रभु मनुष्य को दूसरे के बारे में सोचने वाला, दयालु, परोपकारी बनाते हैं। क्योंकि सभी धर्म मानते हैं कि ऐसा न करने वाला नरक जाता है। आम आदमी सहअस्तित्व में सुख पाता है, समय आने पर दूसरे धर्म वालों की प्राण रक्षा अपना कर्तव्य समझता है। तो यह कौन सा धर्म है जो मारकाट पर निर्भर है? धर्म की यह नई परिभाषा क्या दरिंदगी फैलाने के लिए गढ़ी गई है? एक वर्ग डरता है कि उसके धर्म का अंत हो जाएगा, दूसरा उसके अपमान का बदला लेना चाहता है। दोनों अपने धर्म के लिए हिंसा फैलाते हैं, जबकि कराहता हुआ धर्म चीख-चीख कर बताना चाहता है कि 'मुझे कोई खतरा नहीं है। मैं युगों से तुम लोगों के बचाव के बिना जिया हूं और जीता रहूंगा। अरे, तुम्हारी हरकतें मुझे शर्मिंदा कर रही हैं, मैं अपने ही साथियों से आंख मिलाने में झिझक रहा हूं। ऐसा मत करो।' पर धर्म के ठेकेदार उसकी अनसुनी कर खून की नदियां बहाते जा रहे हैं। इंसान नैतिकता प्रेमी और करुणापूर्ण रहा है। पर आज अपने को शिक्षित और सभ्य समझने वाले लोग पाषाण युग की बर्बर प्रवृत्ति को अपना रहे हैं। कभी धर्म के नाम पर तो कभी आत्मसम्मान के लिए, आज हत्या करना एक खेल बन गया है। यह विकास का नहीं, अवरोध का सूचक है।

धर्मग्रंथ

अलका पाण्डेय

रामचरितमानस व्यक्ति चरित्र नहीं, समष्टि चरित्र है

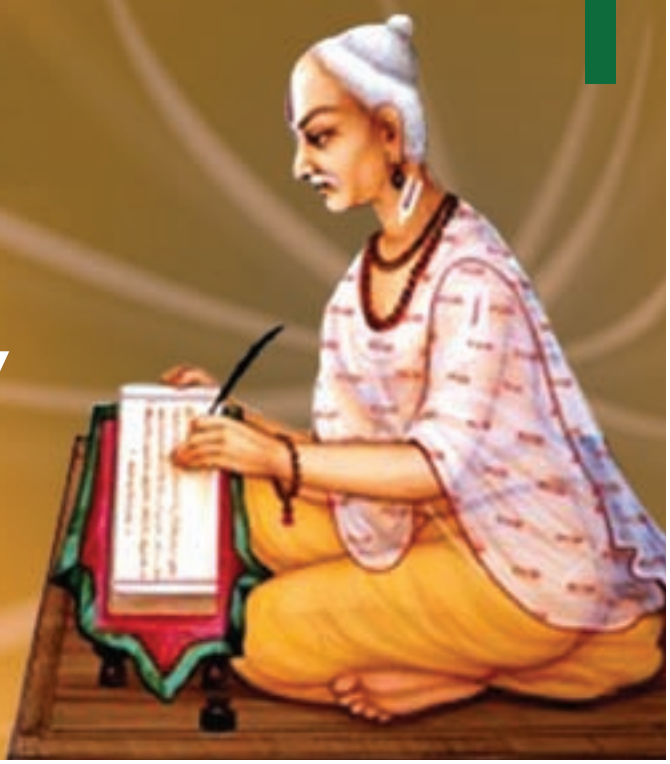

सद्साहित्य सत्य, शिव और सुंदर का समन्वय होता है। आधुनिक युग में इस मत का सबलता के साथ प्रतिपादन श्री टालस्टॉय ने ही किया है। इस कसौटी पर जब उन्होंने विश्व साहित्य के विद्वानों को लिया तो कोई शिव अधिक तो कोई सुंदर कम निकला। कोई तो सुंदर बहुत था, किन्तु सुंदरता को संवारने में उसने शिवत्व की अवहेलना कर दी थी। औरों की तो बात ही क्या, टालस्टॉय की कसौटी पर शेक्सपियर और फ्लावेयर भी खंडित हो गए। यदि महर्षि टालस्टॉय की कसौटी पर कालिदास कसे जाएं तो उनकी भी वही हालत होगी, जो शेक्सपियर एवं फ्लावेयर की हुई। टालस्टॉय के समक्ष तो बाइबिल और कुरान भी नहीं टिक सकी।

टालस्टॉय के सम्मुख केवल विश्व साहित्य में एक ही व्यक्ति है, जो सत्यं-शिवमं-सुंदरम् की कसौटी पर खरा उतारता है। वह है, श्री गोस्वामी तुलसीदास जिन्होंने 'रामरितमानस' लिखकर विश्व के समक्ष एक आदर्श उपस्थित किया। जिसकी तुलना बाइबिल, कुरान और शेक्सपियर के नाटक आदि भी नहीं कर सकते हैं।

सर ग्रियर्सन के अनुसार 'मानस' उत्तर भारत की बाइबिल है। वैसे तो गीर्वाण भारती का भंडार शत-शत काव्य रत्नों से परिपूर्ण है, किन्तु रामचरित उसमें भी अपना बेजोड़ स्थान रखती है। कितने ही टीकाकार, कितने ही वाचक इसके कारण अमर हो गए, फिर भी इस काव्य का सौंदर्य और आकर्षण पूर्ववत ही है। एक गांव के अनपढ़ से लेकर साहित्य का धुरंधर विद्वान तक इस पर मुग्ध हो जाता है।

शेक्सपियर की सराहना करने वाले भी तुलसीदास की प्रतिभा से चमत्कृत हो उठते हैं। मेरे अल्प विचार में यदि रामचरित को बाइबिल के रचियता शेक्सपियर या कुरान के हजरत मोहम्मद हजरत भी इस ग्रंथ का अनुकरण करते तो वह भी तुलसीकृत रामचरित के समक्ष दांतों तले उंगली दबाते नजर आते। संसार के समूचे साहित्य में इस प्रकार का लोकप्रिय काव्य जातीय ग्रंथ नहीं है। भारत को तुलसी के रामचरित पर गर्व है।

स्वामी सच्चिदानंद ने अपनी पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है कि ''राम जैसा आदर्श चरित्र रामचरित में बताया गया है, वैसा संसार के किसी भी महाकाव्य के किसी नायक में मिलना अति दुर्लभ है।''

रामचरित व्यक्ति चरित्र नहीं है, वह समष्टि चरित्र है, विश्व चरित्र है। कवियों की अगणित पीढ़ियों ने संसार की विविध भाषाओं में रामचरित के इसी अक्षय महास्रोत से अपनी-अपनी रमणीय काव्य गंगाओं को प्रवाहित किया है।

लोकप्रियता के चरमोत्कर्ष पर स्थित रामचरित मानस के लिए भारत-भूमि से इंडोनेशिया तक तालियों की गड़गड़ाहट आकाश में गूंजती है। रामचरित संसार में सबसे बड़ा ज्ञान का भंडार है। गुण, ज्ञान, चातुर्य और आदर्शवादिता के लिए मानस का भंडार परिपूर्ण है। यदि हम विश्व के समस्त सद्ग्रंथों इतिहास, पुराणों आदि का अवलोकन करें और प्रत्येक महापुरुष के चरित्र पर विशुद्ध श्रीराम के समान लोकप्रिय जन-नायक और तुलसीकृत रामायण जैसा सद्ग्रंथ कोई दूसरा नहीं है। तुलसी के अत्यंत लोकप्रिय और प्रभावशाली साहित्य के आगे परवर्ती एवं पूर्ववर्ती काल के सभी काव्य प्रयत्न फीके पड़ गये हैं तथा रामचरित के उस गौरव तक नहीं पहुंच सके।

महात्मा गांधी ने भी रामचरितमानस के महत्व को उजागर करते हुए लिखा है कि गीता के संगीत और तुलसी के मानस ने मुझे जितना प्रभावित किया, उतना विश्व के किसी भी ग्रंथ ने नहीं। मैं तुलसी की रामायण को भक्ति मार्ग का सर्वोत्तम ग्रंथ मानता हूं।

रामचरित एक ऐसा ग्रंथ है जो राजा के महलों से लेकर झोपड़ी तक उपस्थित है। मानस के अध्ययन से भी भाई-भाई के, सास बहु के, पति-पत्नी के, गुरु-शिष्य के आदि सभी संबंधियों के संबंध घनिष्ठ बनते हैं। आपसी वैमनस्यता दूर होती है। एक ही नहीं, मानस में कई ऐसे पंक्तियां हैं, जिन्हें अधिकांश व्यक्ति पग-पग पर कहा करते हैं और परोपकारी बनने की प्रेरक है। जैसे-

परहित सरिस धरम नहीं भाई,
पर पीड़ा सम नहीं अधभाई।''

मानस में राजा रामजी की त्याग की भावना आदर्श नागरिक का एक गुण है। राम की त्यागवृत्ति साम्राज्यवादी विचारधारा के विरुद्ध है। यहां श्रीराम लंका पर विजय प्राप्त कर लंका पर राज्य कर सकते थे। लेकिन नहीं वे अपने भक्त विभीषण को लंका का राज्य सौंप देते हैं। परन्तु साथ में संकोच भी है-

जो संपत्ति शिव रावणहिं, दीन्ह दिये दस माथ,
सोई सम्पदा विभीषणहि, सकुचि दीन्ह रघुनाथ।''

मानस हमें कर्मठ होने की प्रेरणा देता है-

कर्मप्रधान विश्व करि राखा,
जो जस करहुं सो तस फल चाखा।

संपूर्ण भारतीय समाज के लिए समान आदर्श के रूप में भगवान श्री रामचंद्रजी को उत्तर से दक्षिण तक सभी ने स्वीकारा है। उत्तर में गुरु गोविंद सिंह ने रामचरित पंजाबी भाषा में लिखा। पूर्व में कृतिवास रामचरित, महाराष्ट्र में भावार्थ रामायण हिन्दी में गोस्वामीजी की रामायण और रामचरित मानस जगत प्रसिद्ध है। मनुष्य के जीवन में आने वाली सभी पूर्ण और उत्तम रूप से निभाने वाली शिक्षा देने वाले श्री रामचंद्र के चरित्र के समान दूसरा कोई चरित्र नहीं। उनका पराक्रम समग्र भारत की एकता का प्रत्यक्ष चित्र है। गाम्भीर्य में समुद्र और धैर्य में हिमाचल के समान है।

महात्मा गांधी ने भी रामचरितमानस के महत्व को उजागर करते हुए लिखा है कि गीता के संगीत और तुलसी के मानस ने मुझे जितना प्रभावित किया, उतना विश्व के किसी भी ग्रंथ ने नहीं। मैं तुलसी की रामायण को भक्ति मार्ग का सर्वोत्तम ग्रंथ मानता हूं। रामचरित गोस्वामीजी का सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक ग्रंथ है। साम्प्रदायिक संकीर्णता उससे कोसो दूर है। व्यवहारिक कल्याण मार्ग उसमें प्रतिबिम्बित है। रामचरित मानस में राष्ट्रीय चेतना को बल देकर दिव्य मानवता जगाने की जितनी शक्ति इसमें है उतनी विश्व साहित्य के किसी ग्रंथ में नहीं है।

यह एक ऐसी आदर्श सभ्यता से युक्त है जिससे मानवता को अवश्यंभावी प्रेरित होना है। विवेकानंद ने लंदन की एक सभा में कहा भी था कि यदि बाइबिल और शेक्सपियर दोनों को मिला भी दें तो भी मानस के तुलसी को नहीं पा सकते।

-बी-62, सरस्वतीकुंज सोसाइटी
25 आई. पी. एक्सटेंशन, दिल्ली-92

ओम् की गहराइयां

अमृत साधना

ओम् एक बीज मंत्र है, जो दरअसल आध्यात्मिक अणुबम है, बहुत शक्तिशाली।

आध्यात्मिक जगत में ओम सर्वाधिक लोकप्रिय शब्द या मंत्र है। न केवल भारत में, बल्कि इस्लाम या ईसाई धर्म में भी यह आमीन या एमान के रूप में पाया जाता है। इसकी लोकप्रियता का कारण यह हो सकता है कि इसका उच्चारण बहुत सरल और सहज है, इसे याद रखने के लिए दिमाग पर जोर नहीं डालना पडता। और इसका जाप करने से तन-मन में मधुरता और संगीत पैदा होता है। यह एक टैंक्विलाइजर की तरह काम में लाया जाता है। लेकिन यह ओम् का वास्तविक उपयोग नहीं है। यह कोई शामक औषधि नहीं है।

ओम् एक बीज मंत्र है, जो दरअसल आध्यात्मिक अणुबम है, बहुत शक्तिशाली। लेकिन बहुत कम लोग इस गहराई तक पहुंच पाते हैं। यह विशुद्ध वैज्ञानिक ध्वनि तरंग है। ओशो ने ओम् का प्रयोग करने की कई विधियां बताई हैं। एक विधि इस प्रकार है:

ओम् का जाप करने के लिए यदि किसी गुंबद वाले भवन के भीतर बैठें, तो अधिक परिणाम होंगे। यह आकार ओम् की ध्वनि को वापस आपके ऊपर बरसाएगा। सबसे पहले ओम् का उच्चारण होठों से करें। इतने जोर से कि आसपास का परिवेश गूंज उठे। एक बात ध्यान रखे, जितना लंबा 'ओ' हो उतना ही लंबा 'म' हो। ताकि इसकी गूंज आपके शरीर में रोम-रोम तक पहुंचे। जब आपका पूरा शरीर ओम् के गुंजार से झनझनाने लगे, तब उसका स्थूल उच्चारण बंद करें। क्योंकि इस ध्वनि को बहुत गहरे तक पहुंचाना है। और वहां पर इसकी तरंगें ही पहुंच सकती हैं, स्थूल ध्वनि नहीं।

दूसरे चरण में अपने होठों को काम में न लें। केवल अपने मन की सहायता से ओम् की ध्वनि उत्पन्न करें। अपने शरीर को भी काम में न लें, तब जो ध्वनि होगी, वह वास्तविक ध्वनि से मिलती-जुलती होगी। उसके बाद उसे भी बंद कर दें और ध्वनि को प्रतिध्वनित होने दें। कोई प्रयास न करें यह अपने से आती है। तब यह जाप बन जाता है। तब आप उसे उत्पन्न नहीं कर रहे होते, आप तो उसके प्रवाह में हैं।

हमारे संरक्षक

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका के नियोजित प्रकाशन के लिए 11,000/- रुपये की राशि प्रदत्त करने वाले संरक्षक सदस्य होंगे जिन्हें पत्रिका आजीवन निःशुल्क प्रेषित की जायेगी और पत्रिका में उनका नाम प्रकाशित किया जाएगा। हमारे प्रथम संरक्षक सदस्य हैं-

श्री जयंतीलाल वालचंद खींचा
निवासी घानेराव, प्रवासी अंधेरी वेस्ट मुम्बई

● महात्म्य ●

सिद्धार्थ कुमार शर्मा

तिलक धारण का रहस्य

हमारे ऋषि-महर्षियों ने जीवन के जिन रहस्यों को जाना, उन्हें मानव के लिए सुरक्षित कर दिया। उनके द्वारा प्रतिपादित तथा निर्देशित तथ्य भारतीय संस्कृति में पूरी तरह समाहित हो गये। क्योंकि, वे तथ्य अनुभूत थे, कोई कपोल-कल्पना नहीं। लेकिन समय परिवर्तन के साथ-साथ तथा पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर अपने पूर्वजों की देन के प्रति मानव-मन-शंकालु हो उठा और 'ऐसा हम क्यों करें?' या 'इससे हमें क्या लाभ है?' जैसे प्रश्न उत्पन्न हो गए।

हिन्दू-संस्कृति के अंतर्गत तिलक धारण करना एक धार्मिक कृत्य है और इसे पवित्र एवं शुभ माना गया है। भारत के प्रत्येक भाग में स्त्री-पुरुष तिलक धारण करते हैं। हालांकि पुरुषों में यह चलन काफी कम है, लेकिन स्त्रियों में खासकर विवाहित स्त्रियों में ज्यादा है। विवाहित स्त्रियां कुंकुम आदि की बिंदी धारण करती हैं। इस बिंदी के कारण भारतीय स्त्रियों की अलग पहचान है।

आज के भौतिकवादी युग में बिंदियां या तिलक भी अनेक नकली चीजों के लगाये जाने लगे हैं। इससे लाभ के स्थान पर हानि होने की अधिक संभावना रहती है।

हमारे धर्म-शास्त्रों में मिट्टी, यज्ञ-भस्म, चंदन, सिंदूर, कुंकुम, हल्दी या केसर आदि का तिलक लगाने का विधान है। अनेक ग्रंथों में तिलक धारण संबंधी उल्लेख है-

'उर्ध्वपुण्ड्रं मृदा धार्य्यं भस्मना त्रिपुण्ड्रकम्।
उभयं चंदनेनैव ह्यभ्यङ्गोत्सवरात्रिषु॥'

अर्थात ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक मिट्टी का धारण करना चाहिए, भस्म का त्रिपुण्ड्र और दोनों प्रकार के चंदन का तिलक तथा अभ्यंग उत्सव रात्रि में करना चाहिए।

शास्त्रों में तिलक अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। पहले बिना तिलक धारण किये व्यक्ति यज्ञ, होम, पूजा-उपासना आदि में सम्मिलित नहीं किया जा सकता था। यहां तक कि राज्य-पद ग्रहण करते समय गुरु जैसे किसी पूज्य व्यक्ति से तिलक धारण करवा कर ही व्यक्ति राजसिंहासन का पात्र बन पाता था। इसके साथ ही, स्त्रियां पुरुषों के युद्ध के लिए गमन करते समय तिलक लगाकर उनके चिरंजीवी तथा विजयी होने की कामना करती थीं, तिलक का महत्व ब्रह्मवैवर्तपुराण में वर्णित निम्न श्लोक से होता है-

'स्नानं दानं तपो होमो देवतापितृकर्म्म च।
तत्सर्वं निषफलं याति ललाटे तिलकं बिना।
ब्राह्मणस्तिलकं कृत्वा कुर्य्यात्संध्याञ्च तर्पणम॥'

अर्थात् स्नान, होम, तप, देवकार्य सब निष्फल हो जाते हैं, यदि मस्तक में तिलक धारण न किया गया हो। ब्राह्मण को चाहिए कि तिलक धारण करने के बाद तर्पण आदि कृत्य करे।

इस प्रकार, हमारे ऋषि-मुनियों ने तिलक धारण करना महत्वपूर्ण माना है। तिलक धारण करने के पीछे धार्मिक ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक कारण भी हैं। कठोपनिषद् में स्पष्ट कहा गया है कि हृदय के 101 नाड़ियां हैं। उनमें से सुषुम्ना नाम की नाड़ी मस्तक प्रदेश के सामने से निकलती है, उसके द्वारा ऊंचे को प्रस्थान करने वाला मोक्ष को प्राप्त करता है, शेष सबका प्राणोत्सर्ग के समय चारों ओर से उपयोग होता है-

'शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभिनिसृतैका।
तयोर्ध्वमायन् न मृतत्वकेति विष्वडन्या उत्क्रमणे भवन्ति॥'

कहने का आशय यह है कि शरीर में फैली अनेक नाड़ियों में से तीन नाड़ियां प्रधान हैं- इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। इन तीनों में से भी सुषुम्ना नाड़ी प्रधान है। ये नाड़ियां भ्रूमध्य से होती हुई ब्रह्मरंध्र में मिलती हैं। यहीं पर शरीर का अंतिम चक्र भी है, जिसे आज्ञा चक्र कहा जाता है। हमारे हृदय में उठे संदेश सर्वप्रथम मस्तिष्क में पहुंचते हैं। मस्तिष्क ही संबंधित इंद्रियों तक वह संदेश पहुंचाता है। इन ज्ञान-तंतुओं का विचारक केन्द्र भृकुटी और ललाट के मध्य भाग में ही स्थित है। इसी स्थान पर ध्यान करके ऋषि-मुनि एवं साधक परमात्म-तत्व प्राप्त करते हैं। इसी स्थान को जाग्रत करने हेतु तिलक लगाया जाता है। दूसरी बात, तिलक धारण करने से मन शांत रहता है जिससे व्यक्ति प्रसन्नता, ताजगी तथा उत्साह अनुभव करता है। सेरोटोनिन एवं बिटांडोरफिन नामक स्राव की कमी व्यक्ति में उदासीनता और अवसाद बढ़ाते हैं, तिलक इनका संतुलन रखता है।

हिन्दू-संस्कृति के अंतर्गत तिलक धारण करना एक धार्मिक कृत्य है और इसे पवित्र एवं शुभ माना गया है। भारत के प्रत्येक भाग में स्त्री-पुरुष तिलक धारण करते हैं।

शास्त्रों में जिन वस्तुओं का तिलक लगाने का उल्लेख किया गया है, वे सभी शुभ तथा पवित्र हैं ही, साथ ही वैज्ञानिक दृष्टि से भी उनमें कई गुण हैं, जैसे- चंदन, केसर, अष्टगंध, हल्दी, कुंकुम, सिंदूर आदि के गुणों को आयुर्वेद ने भी स्वीकारा है, ये सभी औषधीय गुणों से संपन्न हैं तथा इनका तिलक शरीर के स्वास्थ्य को विशेष लाभ पहुंचाता है। तिलक धारण करने से सिरदर्द, बेचैनी तथा त्वचा रोगों से मुक्ति मिलती है। इसी प्रकार तीर्थों की मिट्टी भी शुद्ध तथा दैवीय गुणों से परिपूर्ण होती है। यज्ञ में घी, अनेक उपयोगी औषधियां तथा लाभकारी समिधाएं प्रयोग करने से यज्ञ-भस्म भी स्वास्थ्य के लिए लाभदायक सिद्ध होती हैं।

आजकल लगाये जाने वाले तिलक विशेष लाभदायक सिद्ध नहीं होते, क्योंकि वे उपयुक्त पदार्थों से निर्मित नहीं होते। प्लास्टिक तथा धातु आदि से बनी बिंदियां रूप-सौंदर्य तो बढ़ा सकती हैं, किन्तु स्वास्थ्य संबंधी लाभ नहीं पहुंचाती हैं।

इस प्रकार, स्पष्ट है कि तिलक का न केवल धार्मिक तथा आध्यात्मिक वरन वैज्ञानिक महत्व भी है। यह व्यक्ति के सौंदर्य एवं स्वास्थ्य को बढ़ाने वाला तथा सम्मान व शुभता का प्रतीक है। हां, रात में सोते समय तिलक का प्रयोग वर्जित है। ■

पर्यावरण

डॉ. रामसिंह यादव

वृक्ष हमारे सौभाग्य के सूचक हैं

हमारे पुराणों में वृक्षों की पूजन परम्परा का विशेष उल्लेख मिलता है। अशोक वृक्ष को बहुत सौभाग्य का सूचक माना जाता है और कहा जाता है कि इसे लगाने से हर प्रकार के शोक-संताप दूर हो जाते हैं। घर में तुलसी का पौधा हर प्रकार से वस्तुगत दोषों को दूर करने में सक्षम है। पुराणों के अनुसार माता लक्ष्मी को प्रसन्न करने के लिए घर में श्वेत, ओक, तुलसी, मनी प्लांट, आंवला, हार सिंगार, अशोक, कमल को शुभ माना जाता है। नीम और पीपल वृक्ष को भी देव वृक्ष मानकर पूजन करने की परम्परा है। आंध्रप्रदेश में नीम को राज्य वृक्ष का दर्जा प्राप्त है। पुष्पदार पौधों में चंपा, गुलाब, चमेली, धतुरा, केतकी, परिजात, मालती ओक आदि शुभ एवं मंगलमय माने जाते हैं।

वृक्षों की विशेषताएं भिन्न-भिन्न होती हैं। हरेक वृक्ष की अपनी धार्मिक व सांस्कृतिक महत्ता होती है। पद्मपुराण में भगवान विष्णु को पीपल वृक्ष, भगवान शंकर को वट वृक्ष और ब्रह्माजी को पलाश वृक्ष के रूप में निरूपित किया गया है।

वृक्ष अत्यंत संवेदनशील होते हैं, यह तथ्य भारत में ही नहीं विश्व की अन्य संस्कृतियों में भी देखने को मिलता है। इसी कारण अरण्य और उपवन को हमारे यहां देवताओं की आवासस्थली के रूप में मानकर वहां पर साधना, भजन-पूजन करने की परम्परा थी और इस परम्परा के पीछे एक वैज्ञानिक कारण था। ग्रीक परम्परा में एजेनिस, आटिस, ओरिसस, डिमीटर आदि देवता अन्न एवं वनस्पति देवता के रूप में जाने पहचाने जाते हैं। डायनिस मदिरा और अंगूर लता का प्रसिद्ध देवता था। ओक वृक्ष के कोटर में एफेसियन आर्टेमिस देवता का आवास माना जाता है। हमारे यहां पर भी अश्वत्थ (पीपल) पेड़ पर विभिन्न देवताओं का वास माना जाता है। वृक्ष देवता से धन, संपदा, सुख-शांति संतति की कामना की जाती है। इसलिए वट वृक्ष और पीपल के वृक्ष के पूजन का प्रचलन है।

हमें पेड़ लगाना चाहिए। इससे वास्तुदोष का निवारण होता है तथा अनेक दिव्य एवं प्रत्यक्ष लाभ मिलते हैं। शास्त्र कहता है कि एक पीपल, एक बरगद, दस इमली, कैथ, बेल और आंवले के तीन-तीन और आम के पेड़ लगाने से मनुष्य कभी नरकगामी नहीं होता और वह स्वर्ग का भोग करता हैं। विद्वानों ने कहा है कि पथ पर वृक्षारोपण करने से दुर्गम फल प्राप्त होते हैं। जो फल अग्निहोत्र करने से भी नहीं मिलता है, वह राह पर पेड़ लगाने से मिल जाता है।

धार्मिक आस्था की दृष्टि से पीपल के वृक्ष का स्थान सर्वोपरि है। पीपल पवित्र वृक्ष है इसमें देवताओं एवं पितरों का वास है। श्रीमद् भागवतगीता के 10वें अध्याय के 26वें श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने पीपल को अपनी विभूति बताया है- 'अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम' अर्थात मैं वृक्षों में पीपल हूं। पीपल के मूल में ब्रह्माजी, मध्य में विष्णु की एवं अग्रभाग में शिवजी साक्षात् रूप में विराजमान हैं।

स्कंदपुराण में बताया गया है कि अश्वत्थ वृक्ष के मूल में विष्णु, तने में केशव, शाखाओं में नारायण, पत्तों में भगवान श्रीहरि और पुष्पों में सब देवताओं से युक्त अच्युत सदा निवास करते हैं। यह वृक्ष मूर्तिमान श्री विष्णु स्वरूप है। महात्मा पुरुष इस वृक्ष के पुष्पमय मूल की सेवा करते हैं। इसका आश्रय करना मनुष्यों के सहस्रों पापों का नाशक तथा सभी अभीष्टों का साधक हैं। अनादिकाल से पीपल की पूजा होती आई हैं। कोई मृत्यु को प्राप्त होता है तो उसकी आत्मा की शांति के लिए उसके नियमित पीपल वृक्ष के मूल में जल चढ़ाते हैं। अशौच की पूर्ण निवृत्ति भी देववृक्ष पीपल के स्पर्श मानी गई है। आयुर्वेद में बहुत से रोगों का नाश करने की शक्ति पीपल वृक्ष में बतायी गई है। संसार रूपी पीपल का वृक्ष भी तत्वतः परमात्मारूप होने से पूजनीय है। पीपल, आंवला और तुलसी इनकी भगवद्भाव पूर्वक पूजा करने से भगवान की प्रत्यक्ष पूजा हो जाती है। अश्वत्थ वृक्ष के आरोपण की भी बड़ी महिमा है ऐसे व्यक्ति की वंश परम्परा का उच्छेद नहीं होता। समस्त ऐश्वर्य एवं दीर्घायु की प्राप्ति होती है और पितृगण नरक से छुटकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

अश्वस्तयः स्थापितायेन तत्कुलं स्थापितं ततः।
घनायुषां, समृद्धिस्तु नरकात् तारंयत पित्रम।

अश्रत्थ (पीपल) की पूजा एवं स्पर्श प्रायः शनिवार को ही विशेष रूप से किया जाता है। एक दिन पहले शुक्रवार को प्रातः शुभ मुहूर्त में पीपल वृक्ष के पास जाकर उसकी जड़ में सुपारी, हल्दी, कुमकुम और चावल चढ़ाकर दोनों हाथ जोड़कर कहे-संत श्री मौनीबाबा के बताए अनुसार 'कल्पवृक्ष। पिवृदेव।' मैं कल से सुख, शांति एवं समृद्धि के लिए आपकी विधिपूर्वक पूजा करूंगा। इसके लिए आप मुझे आज्ञा प्रदान करें। इस प्रकार उनकी आज्ञा प्राप्ति की भावना कर दूसरे अगले दिन शनिवार प्रातःकाल तेल की आड़ी बत्तीवाला दीपक जलाए। तांबे के लौटे में जल देकर पीपल वृक्ष के पास जाकर दीपक रखकर पीपल की जड़ में जल चढ़ाएं। पांच बार परिक्रमा करें। परिक्रमा करते निम्न मंत्र बोलें-

अश्वत्थ सुमहाभाग सुभग प्रियदर्शन।
इष्टकामांशय में देहि शत्रुश्यस्तु पराभवम्।
आयुः प्रजां धनं धान्यं सौभाग्यं सर्वसम्पदमं।
देहि देव महावृक्ष खामहं शरण गतः॥

अर्थात महाभाग अश्रत्य। आप सुंदर तथा प्रिया दर्शन है। आप मेरी अभिलाषाओं को पूर्ण करे, मेरे कामादि शत्रुओं का पराभव करें। मुझे दीर्घायु, संतान, धन-धान्य, सौभाग्य तथा सभी प्रकार का ऐश्वर्य प्रदान करें। देव, महावृक्ष मैं आपकी शाखा में हूं। इस प्रकार प्रार्थना पूर्वक परिक्रमा के बाद पीपल की जड़ को स्पर्श करें। पीपल की पूजा करने से ग्रहपीड़ा, पितृदोष, कालसर्प योग, विषयोग तथा ग्रहों से उत्पन्न दोषों का निवारण हो जाता है।

स्कंदपुराण में बताया गया है कि अश्वत्थ वृक्ष के मूल में विष्णु, तने में केशव, शाखाओं में नारायण, पत्तों में भगवान श्रीहरि और पुष्पों में सब देवताओं से युक्त अच्युत सदा निवास करते हैं।

-14, उर्दूपुरा, उज्जैन (म.प्र.)

पथ-प्रदर्शन

डॉ. हौसिला प्रसाद पांडे

'शक्ति संगम तंत्र' में उल्लेख है कि प्राचीनकाल में पांच प्रस्थ थे जिनमें कुल 56 देश समाहित थे– इन्द्रप्रस्थ, यमप्रस्थ, वरुणप्रस्थ, कूर्मप्रस्थ और देवप्रस्थ।

प्रथम विश्वगुरु भारत

संस्कृतियां भिन्न- भिन्न देशों की भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं और वही उन देशों की पहचान भी होती हैं किन्तु इन संस्कृतियों का यदि गहन अध्ययन किया जाए तो कहीं-न-कहीं इनमें भारतीयता की झलक अवश्य दिखलाई पड़ती है। इससे स्पष्ट है कि पूरे विश्व में प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति का प्रभाव था एवं आर्य संपूर्ण विश्व में फैले हुए थे। प्रसिद्ध इतिहासकार पीथाक ने अपनी पुस्तक 'इंडिया इन ग्रीस' में स्पष्ट लिखा है कि आर्यों की विश्व यात्रा यूरोप के विश्व भ्रमण से पहले ही हो चुकी थी जिनके साक्ष्य आज भी यूरोप के वास्तु शिल्प, रहन-सहन, रीति-रिवाज तथा भाषाई समानता आदि के रूप में विद्यमान हैं।

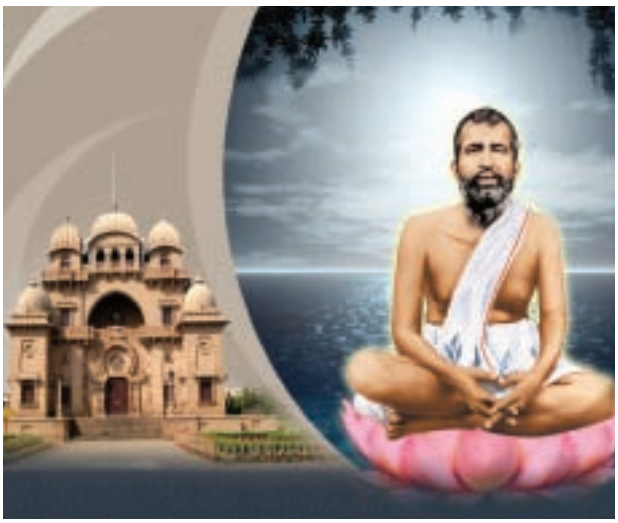

प्रसिद्ध इतिहासकार पीथाक ने अपनी पुस्तक 'इंडिया इन ग्रीस' में स्पष्ट लिखा है कि आर्यों की विश्व यात्रा यूरोप के विश्व भ्रमण से पहले ही हो चुकी थी जिनके साक्ष्य आज भी यूरोप की वास्तु शिल्प, रहन–सहन, रीति–रिवाज तथा भाषाई समानता आदि के रूप में विद्यमान हैं।

कैस्पियन सागर के पश्चिमी तट पर अजरबेजान की राजधानी बाकू में ज्वालादेवी का अतिप्राचीन मंदिर है जिसमें संस्कृत भाषा में एक शिलालेख भी है। सन् 1914 तक इस मंदिर में एक भारतीय पुजारी के भी रहने का उल्लेख मिलता है। अन्य पुस्तकों में भी यह वर्णन मिलता है कि काकेशिया में बसने वाली जाति आसेतिन का आर्यों से अति निकट का रिश्ता है तो खाल्डियन तथा बेबीलोनियन मूल रूप से राजपूत हिन्दू थे। यहां के सूर्य मंदिर के अवशेष बताते हैं कि यहां चार हजार ई.पू. में सूर्य की उपासना होती थी। स्केनडेनेविया में सप्ताह के दिनों के नाम भारतीयों नामों से मिलते-जुलते हैं। अफ्रीकी पर्वत माउंट मेरू, माउंट शंभु भी सिद्ध करते हैं कि यहां कभी आर्य आये थे।

राहुल सांकृत्यान ने लिखा है कि 'काबा' के मंदिरों में स्थित 326 विग्रह इस्लाम काल में तोड़ डाले गये जिनमें से कई के चिह्न आज भी विद्यमान हैं।

'शक्ति संगम तंत्र' में उल्लेख है कि प्राचीनकाल में पांच प्रस्थ थे जिनमें कुल 56 देश समाहित थे- इन्द्रप्रस्थ, यमप्रस्थ, वरुणप्रस्थ, कूर्मप्रस्थ और देवप्रस्थ। इनमें वरुणप्रस्थ पूर्व में राजस्थान से उत्तर हिन्गुला नदी तथा पश्चिम में मक्का तक फैला था। आर्यावर्त का विस्तार मक्का से लंका तक फैले सैंधव नामक समुद्रतटीय क्षेत्र तथा बंगाल की खाड़ी से ब्रह्मपुत्र के उद्गम स्थल तक फैला था। इस प्रकार आर्य सभ्यता का विस्तार लगभग संपूर्ण एशिया तक था।

ईरान, अफगानिस्तान एवं अरब में उस समय आर्य निवास करते थे। अफगानिस्तान के कंधार की राजकुमारी कौरव सम्राट धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी थी। कंधार देश का नाम उस समय गांधार था। व्याकरण रचनाकार महर्षि पाणिनी भी यहीं के रहने वाले थे।

जैसलमेर राजस्थान के भाटी राजाओं के पूर्वज गजबाहु या गजसिंह ने गजनीदेश को बसाया था जिसका उल्लेख तवारीखे- जैसलमेर में मिलता है। जैसलमेर के राजा गजसिंह (गजबाहु) ने युधिष्ठिर संवत् 308 में वैशाख शुक्ल पक्ष तृतीया दिन रविवार रोहिणी नक्षत्र में बसाया था।

'महाभारत मीमांसा' में वर्णित है कि काबुल के पठान उत्तर प्रदेश के चंद्रवंशी क्षत्रिय हैं और इनकी राजधानी प्रतिष्ठानपुर (आज की झूंसी) के निवासी थे। प्रतिष्ठान का ही अपभ्रंश पठान है। ये प्रजातंत्र के हामी थे और इनकी राजव्यवस्था गणों पर आधारित थी। पांडवों ने इन्हीं गणों में से सात गणों पर विजय प्राप्त कर पूरे क्षेत्र को 'सप्तगण' का नाम दिया था जिसके कई 'उपगण' थे जिन्हें उपगण स्थान और फिर अफगानिस्तान कहा जाने लगा।

मैक्समूलर ने लिखा है कि उत्तर भारत के रहने वाले पारसी बाद में जाकर ईरान में बस गये। वैदिक संस्कृत में घोड़े को 'अर्बन' कहा जाता है। जहां ज्यादा घोड़े हो उसे अर्ब कहा जाता था। यही अर्ब अब अरब हो गया। जैसे गायों के चरागाह को 'बृज' कहते हैं और भेड़ बकरियों के देश को 'गांधार' कहा जाता था।

'मनुस्मृति' में लिखा है कि अरब देश के आर्यों से उद्भूत 'शेख' वास्तव में ब्राह्मण वंशी है।

'एशियाटिक रिसर्चेज' नामक ग्रंथ में लिखा है कि इस्लाम धर्म के प्रचार से पूर्व अरब में हिन्दू और हिन्दू धर्म का ही अस्तित्व था। रामानुज सम्प्रदाय के मूल प्रचारक यवनाचार्य 9वीं सदी में अरब से भारत आये थे। अरब देशों के कई राजाओं के नाम जैसे सुवरदत्त, यशदत्त, सुबेधि, असुर नासिरपाल, असुर वाणीपाल, कालयवन आदि भी विचारणीय हैं।

अरब के सम्राट असुर वाणीपाल (वाणासुर) की पुत्री उषा का विवाह श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था। इसी प्रकार मेसोपोटामिया के एक राजा का नाम 'दशरथ' और एक राजा का नाम 'हरि' भी था। नामों की समानता के अतिरिक्त मसोपोटामिया में हुई खुदाई से जो पुरातात्विक सामग्री प्राप्त हुई थी वह सभी भारतीय शैली की है।

'मानवेर जन्म' में लिखा है कि राजा सगरकी आज्ञा से यवनों (क्षत्रियों) ने जिस पल्ली नामक स्थान पर अपना निवास बनाया था वही बाद में अपभ्रंश होकर पल्ली स्थान से पैलेसटाइन हो गया। पुलस्त्य ऋषि के निवास के कारण भी इसे 'पैलेसटाइन' कहते हैं। इस प्रकार संपूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति के चिन्ह आज भी मिलते हैं, इसलिए भारत को विश्वगुरु कहना अतिरंजित नहीं है।

–कुण्डा, प्रतापगढ़ (उ.प्र.)

मीमांसा

श्री भक्तिवल्लभ तीर्थ महाराज

ईश्वर के अगोचर होने का अर्थ

इस संसार में इस समय लगभग छह अरब से ज्यादा लोग होंगे। आज से डेढ़ सौ साल बाद इनमें से शायद ही कोई यहां पर होगा। लेकिन आत्माएं सबकी रहेंगी, क्योंकि वे नित्य हैं। आत्मा शरीर नहीं है। शरीर जड़ है, आत्मा चेतन है। स्वतंत्रता सदा चेतन की होती है, जड़ की नहीं यहां पर एक माइक है, यह माइक कभी नहीं कह सकता कि 'मैं माइक हूं।' हम मनुष्य कहते हैं, यह माइक है। हम सब यह शरीर छोड़ देंगे, फिर भी रहेंगे। जैसे बचपन, यौवन, वृद्धावस्था होती है, वैसे ही मृत्यु भी होती है।

जब बजरंग बली राम का संवाद लेकर माता सीता के पास लंका गए, तब विभीषण ने रावण से कहा, 'रामजी भगवान हैं, सीताजी उनकी शक्ति हैं। आप उनको कष्ट दे रहे हैं, यह अच्छा नहीं है।' रावण को बहुत गुस्सा आया। उसने विभीषण को लात मार दी और उसे लंका से बाहर निकाल दिया। विभीषण को क्रोध तो नहीं आया, पर उसने निश्चय किया, जहां भगवान का सम्मान नहीं, वहां पर नहीं रहना। फिर मन में संशय भी उठा, लोग कहेंगे कि भाई ने क्रोध किया तो दुश्मन से जा मिला। तब विभीषण ने कइयों से मंत्रणा की। वे शिव के पास भी गए। शिवजी ने कहा कि सुनो, तुम्हारे अंदर यह भावना नहीं आनी चाहिए कि लंका में विजय प्राप्त करने के बाद राम तुम्हें लंका का राजा बनायेंगे। यदि तुम्हारा प्रेम सकाम नहीं, तो निश्चित होकर जाओ।

विभीषण राम के शिविर में पहुंचे तो अंगद आदि उन्हें मारने को आमादा हो गए। हनुमान ने उन्हें रोका और कहा कि जब मैं लंका में गया था, तब अशोक वाटिका में मैंने माता सीता को देखा तो मुझसे सीताजी का कष्ट देखा नहीं गया। मैंने रावण की वाटिका तहस-नहस कर दी।

रावण ने राक्षस भेजे तो मैंने उन्हें भी मार दिया। जब इंद्रजीत ने मुझ पर ब्रह्मास्त्र छोड़ा तो ब्रह्माजी के सम्मान के लिए मैंने बंधना स्वीकार कर लिया। मैंने रावण को समझाया कि आपको बाली ने परास्त किया था। राम ने उसको मार दिया, आप सीताजी को छोड़ दीजिए अन्यथा उनके हाथों आप भी मारे जाओगे। लेकिन रावण को इतना गुस्सा था कि उसने सैनिकों को आदेश दे दिया कि इस बंदर को मार दिया जाए। उस समय इन्हीं विभीषण ने रावण को समझाया, इनको मारना नहीं चाहिए, ये तो दूत हैं।

हनुमान की बात सुनकर वानर सेना व भालू सेना का भाव विभीषण के प्रति बदल गया। तभी वहां पर राम भी आ गए। उन्हें सारी बात बताई गई। राम मुस्करा दिए, कहने लगे, विभीषण की बात छोड़ो, अगर रावण भी आ जाए और एक बार कह दे कि मैं तुम्हारे शरणागत हूं तो मैं उसे शरण प्रदान कर दूंगा। असल में यही है भगवान का वात्सल्य। राम परब्रह्म हैं, रावण जीव है। भगवान की शक्ति का अंश जीव माया को भोगने से भटक गया है। रावण की तरह मनुष्य भी। लेकिन भटका हुआ मनुष्य भी ईश्वर की ही संतान है, राम के वचन आपने सुने कि जो मेरे पास शरणागत होकर आ जाता है, उसे मैं अभय प्रदान करता हूं।

भगवान की लीलाएं अद्भुत हैं। वे हमारी बुद्धि से परे हैं, हमारी इन्द्रियां सीमित हैं, अत: हमारी सोचने की शक्ति भी सीमित है। जैसे हमारी आंखों को देखने की सीमा है। वह बहुत समीप या बहुत दूर तक नहीं देख सकतीं। हमारे कान बहुत ऊंचा या बहुत धीमा नहीं सुन सकते।

हमारी जीभ बहुत गर्म या ठंडा नहीं निगल सकती। इसी प्रकार हम अति तप्त या अति ठंडी वस्तु पर बैठ नहीं सकते। हमारी बुद्धि की भी एक सीमा है। जैसे हमारी इंद्रियां अपूर्ण हैं वैसे ही हमारी बुद्धि भी अपूर्ण है। ईश्वर का रूप, गुण, लीला और शक्ति पूर्ण है। अपनी अपूर्ण इंद्रियों से हम पूर्ण के बारे में सब कुछ नहीं जान सकते। ■

गर्व चूर्ण

शिवचरण मंत्री

अपने समय के महान विजेता हेद्रिसन ने अपने राज्य में घोषणा करवाई कि प्रजा उसे अपना 'ईश्वर' माने। यदि किसी ने आज्ञा नहीं मानी तो उसे मृत्युदण्ड दिया जायेगा। अत: प्रजा हेद्रिसन को ईश्वर मानने लगी।

प्रात:काल का समय था। सम्राट अपने महल में बैठा था कि राज्य का एक बड़ा व्यापारी राजा के सामने उपस्थित होकर बोला– ''महाराज! मेरे तीन जहाज समुद्री तूफान की चपेट में फंस गये हैं। मेरे जहाजों में अपार सामान हैं। सामान कीमती और दुर्लभ है। यदि मेरे जहाज डूब गये तो मैं कंगाल हो जाऊंगा। मैं.....।''

''तुम घबराओ मत, मैं अभी नौसेना के नायक के साथ अपने नौसैनिकों को भेज देता हूं, वे तुम्हारे जहाजों को बचा लेंगे। वे अपने प्रयत्नों से तुम्हारे जहाजों को लंगर पर लगा देंगे।'' सम्राट ने अपने नौकर को नौसेना अध्यक्ष को बुलाने का आदेश दिया।

व्यापारी ने हाथ जोड़कर कहा–''महाराज! आप तो ईश्वर हैं। आपके पास असीम शक्तियां हैं।''

''तुम्हें, हमारी शक्तियों में क्या संदेह हैं?''

''नहीं, श्रीमान् पर...।''

''क्यों मौन हो गए? बोलो?''

''आप ईश्वर हैं, अत: मानवीय सहायता के बजाय थोड़ा पवन को आदेश दे कि वह मेरे जहाजों को समुद्री तट पर लगा दें...।''

''पर मैं पवन को आदेश नहीं दे सकता।'' हेद्रिसन ने सिर का पसीना पोंछते हुए कहा– ''मेरी भूल हुई कि मैंने अपने आपको ईश्वर मान लिया।''

व्यापारी तुरंत दरबार से बाहर चला गया।

–श्रीनगर, अजमेर-305025 (राजस्थान)

संस्कृति

डॉ. कल्याण प्रसाद वर्मा

'कुश' के बिना हिन्दू धर्म में होने वाली कोई भी पूजा अधूरी मानी जाती है। जहां तक कि भाद्रपद की अमावस्या कुशग्राही या कुशग्राह्य अमावस्या के रूप में गृहीत है।

पवित्री 'कुशा' की महिमा अपार

भारतीय सांस्कृतिक परिवेश में धार्मिक दृष्टि से 'दूब' की तरह 'कुशा' को भी बहुत पवित्र माना गया है। यों दूर्वा, तुलसी, वटवृक्ष, पीपल, आम, आंवला, अशोक, विल्वपत्र, पलाश, आंकड़ा, कनेर व गूलर आदि बहुत-सी प्रकृति प्रदत्त चीजें हैं, जो किसी न किसी रूप में पूजन व धार्मिक अनुष्ठानों के प्रयोग में ली जाती हैं। ऐसी ही प्रकृति प्रदत्त चीजों में से एक है- 'कुशा'। 'कुशा' का ही 'कुश' एक पारम्परिक शब्द है, जिसे लोकभाषा में 'डाब' कहा जाता है।

शाब्दिक अर्थ में 'कुशा' कड़ी और नुकीली पत्ती वाली एक प्रकार की घास है जो यज्ञ-पूजन, श्राद्ध-तर्पण आदि धार्मिक कृत्यों में प्रयुक्त होने वाली आवश्यक सामग्री मानी जाती है। 'कुशा' न केवल शुद्धता व शुचिता की ही प्रतीक है, बल्कि बहु प्रयोजनीय भी है। हवन के पूर्व यज्ञ कुंड के पास बिछाई जाती है। इस कार्य को कुशस्तरण कहा जाता है। कुश का बना हुआ आसन पवित्र माना गया है। भगवान श्रीकृष्ण ने 'गीता' में आसन के लिए जहां 'चैला जिनकुशोत्तरम्' का विशेषण देकर समझाया गया है वहां स्पष्टत: कुशा की महत्ता दर्शित होती है। अर्थात् पहले कुशा फिर मृगछाला और उस पर कपड़ा बिछाकर आसन का विधान बताया गया है।

ऐसा भी माना जाता है कि मृगछाला के नीचे कुशा का आसन रखने से वह शीघ्र खराब नहीं होता। गीता में यह भी बताया गया है कि साधक कुशायुक्त आसन को स्थापन करके मन को एकाग्र कर योग का अभ्यास करे तो शुभ फल की प्राप्ति होती है। कुशा में व्याप्त प्रदूषण रोधक विभिन्न गुणों व पर्यावरणीय क्षमता के कारण ही लोगों को सूर्यग्रहण व चंद्रग्रहण के सूतक लगने से पूर्व रसोई में रखी हुई खाद्य सामग्री यथा आटा, दूध व जल आदि के पास कुशा रखते देखा जाता है ताकि खाद्य सामग्री पर ग्रहण का दुष्प्रभाव न पड़े और खराब न हो तथा उक्त सामग्री यथावत शुद्ध की शुद्ध बनी रहे।

कहना न होगा 'कुश' के बिना हिन्दू धर्म में होने वाली कोई भी पूजा अधूरी मानी जाती है। जहां तक कि भाद्रपद की अमावस्या कुशग्राही या कुशग्राह्य अमावस्या के रूप में गृहीत है। इस दिन लोग कुश इकट्ठा करते हैं और इसी कुश को वर्ष भर होने वाले यज्ञ, हवन आदि धार्मिक कार्यों में प्रयुक्त करते हैं।

अब प्रश्न है 'कुशा' पवित्र कैसे हुई? इसके पवित्री होने के पीछे कोई विशेष सूत्र तो उपलब्ध नहीं होते किन्तु महाभारत में एक कथा प्रसंग अवश्य आता है। उस प्रसंग के अनुशीलन से पता चलता है कि कुशा पहले एक साधारण घास ही थी। अमृतघट के सुधाकणों के संस्पर्श होने पर कुशों को पवित्री की संज्ञा प्रदान की गई। अत: संक्षेप में यहां उक्त कथा प्रसंग को प्रस्तुत करना प्रासंगिक ही होगा ताकि यह पता चल सके कि दूब की तरह की यह घास पवित्रता के दायरे में कैसे सम्मिलित हो सकी।

प्रसंग है- महाभारत (आदिपर्व) के अनुसार दक्ष प्रजापति की दो कन्याएं थीं- कद्रू और विनता। उनका विवाह कश्यप ऋषि से हुआ था। कद्रू और विनता में सौतिया डाह था। सर्पों के छल से बाजी हार जाने पर विनता जब अपनी सौत कद्रू की दासी हो गई तो विनतानंदन 'गरुड़' को बहुत दु:ख हुआ। संतप्त गरुड़ ने सर्पों से पूछा 'सर्पगण ठीक-ठीक बताओ।' तुम्हें कौन सी वस्तु ला दूं या कौन सा उपहार ला दूं जिससे मेरी माता दासत्व से मुक्त हो जाए। तब सर्पों ने गरुड़ से अमृत लाने को कहा।

सर्पों की बात सुनकर गरुड़ अमृत लाने के लिए चल दिए। कई बाधाओं को पार करते हुए गरुड़ जब अमृत लेकर लौट रहे थे तब रास्ते में उनकी इन्द्र से भेंट हो गई, इंद्र ने गरुड़ से अमृत मांगा। गरुड़ ने इंद्र को अमृत देने से इंकार करते हुए कहा- ''यह अमृत मैं किसी उद्देश्य विशेष से ले जा रहा हूं, इसे मैं किसी को नहीं दूंगा। गरुड़ ने अमृतघट कुशों पर ले जाकर रख दिया। अमृतघट रखते हुए गरुड़ ने सर्पों से कहा लो मैं तुम्हारी इच्छित वस्तु ले आया हूं। स्नान करके पवित्र हो लो फिर इसे पीना।'' सर्प स्नान करने के लिए चले गए।

इसी बीच इन्द्र अमृतघट को हर कर स्वर्गलोक ले गए। मंगल कृत्यों से सर्पों के वापस आने और अमृत न मिलने पर उन्हें बहुत दुख हुआ किन्तु सर्पों ने समझा जहां अमृतघट रखा गया है, संभव है वहां उसकी किंचित बूंदें छलक कर गिर गई हो। इसलिए उन्होंने कुशों को चाटना शुरू कर दिया। नि:संदेह अमृत का कुछ अंश कुशों पर गिरा ही था। माना जाता है तभी से अमृत का स्पर्श होने के कारण कुशों को पवित्री की संज्ञा प्रदान की जाने लगी। कुशा के पवित्र होने के मूल में अनुस्यूत इस कथा प्रसंग से जो संकेत मिलते है उसके आधार पर यह मान्य हो गया कि प्रारंभ में कुशा जैसी साधारण घास अमृतकणों से संस्पर्श के आधार पर कुशा पवित्री हो गई तथा ऋषि-मुनियों ने कुशा को पूज्य मान लिया। इतना ही नहीं पवित्री कुशा की महिमा अपार है क्योंकि आर्ष ग्रंथों में इसके अग्रभाग में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु और अंत में भगवान शंकर का वास माना गया है और फिर श्राद्ध कर्म के प्रतीक कुशा, कौआ, गाय व कुत्ता के साथ-साथ तर्पण में 'कुशा' का महत्वपूर्ण स्थान है।

-111/283, अग्रवाल फॉर्म, मानसरोवर
जयपुर-302020 (राजस्थान)

दर्शन

आचार्य श्री विद्यासागर

साधु-समाधि सुधा-साधन

हर्ष विषाद से परे आत्म-सत्ता की सतत अनुभूति ही सच्ची समाधि है। यहां 'समाधि' का अर्थ 'मरण' है। साधु का अर्थ है श्रेष्ठ/अच्छा। अत: श्रेष्ठ/आदर्श-मृत्यु को साधु-समाधि कहते हैं। 'साधु' का दूसरा अर्थ 'सज्जन' भी है। अत: सज्जन के मरण को भी साधु-समाधि कहेंगे। ऐसे आदर्श-मरण को यदि हम एक बार भी प्राप्त कर लें तो हमारा उद्धार हो सकता है।

जन्म और मरण किसका? हम बच्चे के जन्म के साथ मिष्ठान वितरण करते हैं। बच्चे के जन्म के समय सभी हंसते हैं, किन्तु बच्चा रोता है। इसलिए रोता है कि उसके जीवन के इतने क्षण समाप्त हो गए। जीवन के साथ ही मरण का भय शुरू हो जाता है। वस्तुत: जीवन और मरण कोई चीज नहीं है। यह तो पुद्गल का स्वभाव है, वह तो बिखरेगा ही।

आपके घरों में पंखा चलता है। पंखें में तीन पंखुड़ियां होती हैं पर जब पंखा चलता है तो एक पंखुड़ी मालूम पड़ती है। ये पंखुड़ियां उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य की प्रतीक हैं तथा पंखे के बीच का डंडा जो है वह सत् का प्रतीक है। हम वस्तु की शाश्वतता को नहीं देखते केवल जन्म-मरण के पहलुओं से चिपके रहते हैं जो भटकाने/घुमाने वाला है।

समाधि ध्रुव है, वहां न आधि है, न व्याधि है और न कोई उपाधि है। मानसिक विकार का नाम आधि है। शारीरिक विकार व्याधि है। बुद्धि के विकार को उपाधि कहते हैं। समाधि मन, शरीर और बुद्धि से परे है। समाधि में न राग है, न द्वेष है, न हर्ष है और न विषाद। जन्म और मृत्यु शरीर के हैं। हम विकल्पों में फंस कर जन्म-मृत्यु का दु:ख उठाते हैं। अपने अंदर प्रवाहित होने वाली अक्षुण्ण चैतन्य धारा का हमें कोई ध्यान ही नहीं। अपनी त्रैकालिक सत्ता को पहचान पाना सरल नहीं है। समाधि तभी होगी जब हमें अपनी सत्ता की शाश्वतता का भान हो जायेगा। साधु-समाधि वही है जिसमें मौत को मौत के रूप में नहीं देखा जाता है। जन्म को भी अपनी आत्मा का जन्म नहीं माना जाता। जहां न सुख का विकल्प है और न दु:ख का।

एक सज्जन ने मुझसे कहा, ''महाराज कृष्ण जयंती है आज।'' मैं थोड़ी देर सोचता रहा। मैंने पूछा, ''क्या कृष्ण जयंती मनाने वाले कृष्ण की बात आप मानते हैं? कृष्ण गीता में स्वयं कह रहे हैं कि मेरी जन्म-जयंती न मनाओ। मेरा जन्म नहीं, मेरा मरण नहीं। मैं तो केवल सकल ज्ञेय ज्ञायक हूं। त्रैकालिक हूं। मेरी सत्ता तो अक्षुण्ण है।'' अर्जुन युद्ध-भूमि में खड़े थे। उनका हाथ अपने गुरुओं से युद्ध के लिए नहीं उठ रहा था। मन में विकल्प था कि 'कैसे मारूं अपने ही गुरुओं को।' वे सोचते थे, चाहे मैं भले ही मर जाऊं किन्तु मेरे हाथ से गुरुओं की सुरक्षा होनी चाहिए। मोहग्रस्त ऐसे अर्जुन को समझाते हुए श्रीकृष्ण ने कहा–

जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु ध्रुवो जन्म मृतस्य च
तस्माद परिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।

जिसका जन्म है उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है और जिसकी मृत्यु है उसका जन्म भी अवश्य होगा। यह अपरिहार्य चक्र है, इसलिए हे अर्जुन! सोच नहीं करना चाहिए। अर्जुन! उठाओ अपना धनुष और क्षत्रिय-धर्म का पालन करो। सोचो, कोई किसी को वास्तव में मार नहीं सकता। कोई किसी को जन्म नहीं दे सकता। इसलिए अपने धर्म का पालन श्रेयस्कर है। जन्म-मरण तो होते ही रहते हैं। आवीचि मरण तो प्रति समय हो ही रहा है। कृष्ण कह रहे हैं अर्जुन से और हम हैं कि केवल जन्म-मरण के चक्कर में लगे हैं क्योंकि चक्कर में भी हमें शक्कर-सा अच्छा लग रहा है।

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रकट जे दु:ख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन।

हम शरीर की उत्पत्ति के साथ अपनी उत्पत्ति और शरीर के मरण के साथ अपना मरण मान रहे हैं। अपनी वास्तविक सत्ता का हमको भान ही नहीं। सत् की ओर हम देख ही नहीं रहे हैं। हम जीवन और मरण के विकल्पों में फंसे हैं किन्तु जन्म-मरण के बीच जो ध्रुव सत्य है उसका चिंतन कोई नहीं करता। साधु-समाधि तो तभी होगी जब हमें अपनी शाश्वत सत्ता का अवलोकन होगा। अत: जन्म-मरण के चक्कर में न पड़कर हमें अपनी शाश्वत सत्ता का ही ध्यान करना चाहिए, उसी की संभाल करनी चाहिए। ■

● विवेचन ●

आचार्य चंदन मुनि

विवाह का आदर्श

श्रावक का तीसरा गुण है- कुलशीलसमैः सार्धं, कृतोद्वाहोन्यगोत्रजैः। वह वैवाहिक संबंध कुल, शील में समान अन्य गोत्रजा परिवार में करता है। विवाह करने में कुल, शील की समानता आवश्यक है। यदि कुल, शील असमान होते हैं तो बड़ी कठिनाई होती है। मान लीजिए एक परिवार निरामिष भोजी है, उसकी लड़की की शादी मांसाहारी के यहां होती है तो उस लड़की के लिए तथा जिस परिवार में जाती है, उसके लिए भी एक समस्या पैदा हो जाती है।

जीवन का यथार्थ सत्य और आदर्श ब्रह्मचर्य ही है। ब्रह्मचर्य का बड़ा महत्व है। जो आजन्म ब्रह्मचारी रह सकते हैं, उनके लिए तो यह बड़ी ही उत्तम बात है। जो ऐसा करने में सक्षम नहीं है, उनके चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास) का पालन करना आवश्यक है। मनु ने मनुष्य की 100 वर्ष की आयु मानकर मानव-जीवन को चार भागों में विभाजित किया था, जो निम्न प्रकार हैं-

(1) 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्याश्रम।
(2) 25 से 50 वर्ष तक गृहस्थाश्रम।
(3) 50 से 75 वर्ष तक वानप्रस्थाश्रम।
(4) 75 के पश्चात संन्यासाश्रम।

किन्तु आज 100 वर्ष की आयु पाना कठिन है। हां, लगभग 80 वर्ष तक मानव की आयु आंकी जा सकती है। अतः 80 वर्ष को चार भागों में विभाजित करने से निम्न प्रकार विभाजित हो सकता है–

(1) 1 से 20 वर्ष तक ब्रह्मचर्याश्रम।
(2) 20 से 40 वर्ष तक गृहस्थाश्रम।
(3) 40 से 60 वर्ष तक वानप्रस्थाश्रम।
(4) 60 वर्ष के बाद संन्यासाश्रम।

सिद्धान्ततः ब्रह्मचर्य को उपादेय मानते हुए एक पत्नीव्रत या एक पतिव्रत का आदर्श हमारी संस्कृति में है। कहा गया है कि–''एक नारी ब्रह्मचारी।''

विवाह मण्डप में अग्नि को साक्षी देकर पण्डित जो श्लोक बोलते हैं, वर कन्या की तो बात ही जाने दें, संभवतः कतिपय पुरोहित भी उसका ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझते। यों ही तोते की तरह रटकर श्लोक पढ़ देते हैं। मगर उन श्लोकों में बड़ा ही उदात्त भाव छिपा है। पुरुष स्त्री से कहता है- हे स्त्री! मैं तेरा हाथ सौभाग्य के लिए ग्रहण करता हूं। तू मेरे जीवन में इस तरह सहारा बनेगी, जैसे वृद्ध के हाथ का सहारा लकड़ी बनती है। इसी प्रकार हम दोनों 100 साल तक कानों से सुनेंगे, 100 साल तक आंखों से देखेंगे। स्त्री भी पुरुष से कहती है–मेरा तुम्हारा जीवनपर्यन्त साथ होगा, मैं अन्य पुरुष की ओर नहीं देखूंगी। पर, ध्यान रहे, 100 वर्ष तक हम तभी जी सकते हैं, जब हमारा, शील, ब्रह्मचर्य और साधन ठीक रहें।

जब तक आश्रम के नियमों का ज्ञान ठीक तरह से नहीं होगा, तब तक अच्छी संतति पैदा नहीं हो सकती। नीति में कहा है–विवाह में सात बातें देखनी चाहिए अर्थात पिता को वर में सात बातें देखकर कन्यादान करना चाहिए– 1) कुल-वर का कुल उत्तम हो। 2) शील (आचार) पवित्र हो। 3) सनाथता–जिस घर में लड़की जा रही है, वह घर भरा-पूरा हो। सास, ससुर, जेठ, जेठानी, देवर आदि सभी हों। घर में अकेले दुलहा-दुलहिन न हों। 4) वर पढ़ा-लिखा हो। 5) उचित धन हो। 6) वर शरीर से सुंदर और स्वस्थ हो। 7) वर की आयु कन्या के योग्य हो। जैसे यदि 20 साल की कन्या हो तथा 25 साल का वर हो तो उनका संबंध योग्य है। इसके पहले कन्या का संबंध नहीं होना चाहिए।

मनु ने कहा है–जीवन के चौथे भाग (अर्थात् 1 साल से 20 साल) तक ब्रह्मचर्य का पालन करके फिर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिए, तभी संतान योग्य होगी। कितने दुःख की बात है, आजकल नवयुवकों की शादी हो जाने पर मां की वाणी तक उनको अच्छी नहीं लगती। यहां तक भी होता है कि लड़के मां-बाप का बंटवारा कर लेते हैं। मां को कोई लड़का खिलाता है, बाप को कोई दूसरा। जिस देश में 'मातृदेव भव, पितृदेवो भव' का आदर्श था, उसी देश के लोग मां-बाप का किंचित मात्र भी सम्मान नहीं करते। वे स्वयं माता-पिता की सेवा नहीं करते और समय आने पर जब उनकी संतति भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करती है तो वे अपने भाग्य और संतान को बुरा-भला कहते हैं।

आजकल कुछ लोग कन्या का विक्रय भी करते हैं। कन्या का विक्रय करना मांस-विक्रय करने भी ज्यादा पाप है। वर का भी अब विक्रय होने लगा है। यदि लड़का नौकरी करता है वह इंजीनियर, डॉक्टर, सीए, वकील, आईएएस है तो उसके लिए मोटा दहेज मांगा जाता है। यह बड़ी शर्म की बात है। हमारी संस्कृति में विवाह जहां जीवन का अमूल्य सौदा था, वहां हममें कितनी नीच भावना घर कर गई है। उसका परिणाम भी हमें भोगना पड़ेगा।

कन्या के प्रति आज जो हीनभावना लोगों में व्याप्त हो चुकी है इसी कारण कन्या का जन्म लेना अभिशाप समझा जाने लगा है। मगर कन्या का जन्म वास्तव में अभिशाप नहीं है। सीता के गुणों के कारण आज उनका कितना आदर-सम्मान है, मगर सीता का भाई, जिसका नाम भामण्डल था, उसको कौन जानता है? जानकी के कारण ही जनक का नाम भी अमर हो गया। ■

अभियान

डॉ. त्रिभुवन चतुर्वेदी

आज जितना हल्ला भ्रष्टाचार के विरुद्ध उठ रहा है, उतना ही सामाजिक कदाचार के विरुद्ध उठना चाहिए। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से यही कहा था–'मामस्यर युद्ध च।' मेरा स्मरण हृदय में रखते हुए कर्तव्य पालन कर।

अपसभ्यता के विरुद्ध आंदोलन जरूरी

आज हमारे देश की सामाजिक परिस्थितियां कुछ ऐसी बन गई है कि 'सत्यमेव जयते' को आदर्श मानने वाले देश में असत्य और सभी तरह के धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पाखंड का बोलबाला है। बड़े-बड़े जुलूस निकलते हैं, जलसे होते हैं, कथा-वार्ताएं, सत्संग आदि में कार्यक्रम होते हैं। कुंभ स्नानों व हजयात्राओं में लाखों लोग शामिल होते हैं। पर इनके होते हुए भी मिथ्या भाषण, चोरी, डकैती, बलात्कार, रिश्वतखोरी, खाद्य पदार्थों और औषधियों में मिलावट, स्पष्ट और प्रच्छन्न वेश्यावृत्ति, दहेज लोलुपता, धार्मिक और जातीय विद्वेष, हमारी जीवनशैली का अंग बनता जा रहा है। सभ्यता, संस्कृति और वैज्ञानिक दृष्टिकोण की बातें तो बहुत होती है। संचार माध्यमों के द्वारा, उच्च स्तर के प्रवचन व आयोजन भी प्रसारित होते हैं, पर उनका कोई प्रबल प्रभाव जनमानस पर नहीं पड़ रहा है।

महात्मा गांधी का कहना था कि भारत में सभ्यता अभिशप्त है। सड़क पर खड़े होकर पेशाब करना, गुटखा थूकना, ऊंची आवाज में डीजे बजाकर पड़ोसियों की नींद खराब करना, धार्मिक आयोजनों या बारातों के बड़े-बड़े जुलूस निकालकर ट्रैफिक बाध्य करना, कीर्तनों व आयोजनों को लाउडस्पीकरों द्वारा ध्वनित करना, सड़कों पर आवारा गायों व पशुओं को छोड़ देना, दूसरों के घरों के सामने या पार्कों में अपने पालतू कुत्तों से विष्ठा कराना, पूरे मुहल्लों में चूहों को बाजरा व बंदरों को चने डालकर उत्पात की सुविधा देना, आज हमारी यह कैसी सभ्यता बनती जा रही है?

देश के किसी भी नगर में स्वच्छ शौचालयों या मूत्रालयों की समुचित व्यवस्था नहीं है। विदेशों में, पश्चिम के देशों में पेट्रोल पम्पों पर भी साफ सुथरे शौचालय है। सड़क पर थूकना या कचरा फेंकना निषिद्ध है। पालतू कुत्तों के मालिक कुत्तों को घुमाते समय विष्ठा संग्रह के लिए थैलियां रखते हैं। पर हमारे सार्वजनिक जीवन में यह कदाचार द्रष्टव्य है।

कोई भी समाज सत्य और न्याय के खंभों पर ही टिक पाता है। पर यहां सत्य का पग-पग पर हनन होता है। खासकर हमारे न्यायतंत्र को अक्षम और लचर भी लोग कहने लगे हैं। लोग कहते हैं कि यह तारीखबाजों, धनलोलुप वकीलों, निर्णय लेने की फजीहत से बचने वाले या कार्यभार से दबे न्यायधीशों की बुराइयों से ग्रस्त हैं। देश में सभी समस्याओं पर बने कानूनों की भरमार है, पर उनका कार्यान्वयन व अनुपालन लचर है। जिस व्यवस्था में न्याय नहीं मिलेगा या देर से मिलेगा या वकीलों के दांव पेचों में फंसा होगा वहां झूठ, फरेब, ठगी, धोखेबाजी, चोरी, डकैती व हत्याओं जैसे अपराध बढ़ते ही रहेंगे। और बेईमान और अपराधी मूंछों पर ताव देकर घूमते ही रहेंगे।

प्रश्न यह उठता है कि भारत का बौद्धिक वर्ग इस कदाचार के विरोध में क्यों नहीं सक्रिय होता है? पर आज स्थिति यह है कि देश में परीक्षाओं में नकलबाजी व रिश्वत लेकर या जाति आधार पर डिग्रियों का बंदरबांट भी चल रहा है। बौद्धिक वर्ग, प्रमोशन, सम्मान और पारितोषिकों की जोड़-तोड़ में व्यस्त पाया जाता है। यहां पुरस्कार मैनेज किये जाते हैं, यह किसी विचार प्रणाली के अनुगमन पर बांटे जाते हैं और बौद्धिकजन इनमें व्यस्त हैं। तरह-तरह की डीम्ड यूनिवर्सिटियां, टेक्निकल कॉलेज और प्रोफेशनल कॉलेज खोले जा रहे हैं, जिनमें नियमानुकूल व्यवस्थाओं की कमी पायी जाती है। पर वे रिश्वतखोरी या नेतागिरी के आधार पर संचालित होते हैं। इनमें प्राप्त डिग्रियों के धारी बेरोजगार या अल्प वेतनभोगी बनकर जीवनभर गरीबी में दिन काटते हैं।

इन पर अंकुश लगाने वाला संचारतंत्र पूंजीपतियों के हितों का रक्षक बनता जा रहा है। संवादों व समाचारों में भी निष्पक्षता की कमी का दोष अक्सर लगाया जाता है। उपदेश ऊंचे हैं, पर व्यवहार निराशाजनक है। बुद्धिजीवियों में सत्ताधारियों के तलुए चाटकर अपने धन, वैभव व जायदाद की वृद्धि की प्रवृत्ति पायी जाती है। ऐसे में निस्पृह बुद्धिजीवियों की आवाज तूती बनकर रह गई है। वर्तमान मीडिया या संचार साधनों ने एक ओर भारतीयजन को अधिक जागरूक बनाया है तो दूसरी ओर चालाकी भरे प्रचार ने उसे लूटने का साधन भी बना दिया है। ऐसी स्थितियों में सामान्यजन उनका सहज शिकार बनता है।

भारत आज भी विश्व के अन्य देशों के लिए अध्यात्म व योग का प्रेरणास्रोत है। पर जब तक सामान्यजन के आचरणों में नैतिकता व सच्ची आध्यात्मिकता की स्थापना न हो, तब तक वर्तमान स्थिति में विशेष अंतर न आ सकेगा। इसके लिए बुनियादी शिक्षा में भारतीय जीवन मूल्यों व जीवनशैली की श्रेष्ठता की भावना भरना आवश्यक होगा। आज पाखंड और सामंतवादी मानसिकता बाजारवाद से प्रसार व प्रचार पाकर भयानक रूप से जनभक्षण कर रही है। यह तो सही है कि बढ़ती जनसंख्या वाले देश में रोजगार की प्राप्ति एक समस्या है। अतः आधुनिक शिक्षा प्रणाली जॉब ओरियेंटेड या रोजगार अनुप्राणित हो, यह एक आवश्यकता है। पर जो शिक्षा केवल जानकारियां बढ़ाये, व्यक्ति को समाज की अपेक्षाओं से विरत करे, वह अपूर्ण ही मानी जायेगी।

अतः आज जितना हल्ला भ्रष्टाचार के विरुद्ध उठ रहा है, उतना ही सामाजिक कदाचार के विरुद्ध उठना चाहिए। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से यही कहा था–'मामस्यर युद्ध च।' मेरा स्मरण हृदय में रखते हुए कर्तव्य पालन कर। समाज में व्याप्त कदाचार के विरुद्ध युद्ध तो भारतीयजन को करना ही होगा।

-161 विद्युत नगर-बी, अजमेर रोड जयपुर-302021

● विवेक ●

प्रो. महेन्द्र रायजादा

सिद्धांत और उनकी अनुपालना

सभी धर्मों के सिद्धांत बहुत अच्छे होते हैं। यदि धर्मावलंबियों अथवा उस धर्म के अनुयायियों द्वारा उन सिद्धांतों अथवा धर्म की आचारसंहिता की निष्ठापूर्वक अनुपालना की जावे तो विश्व में सुख-शांति सदा बनी रह सकती है। दुनिया के जितने भी धर्म हैं- ईसाई, यहूदी, इस्लाम, जैन, बौद्ध, वैष्णव, सनातन आदि सभी के सिद्धांत मानवजाति तथा सभी जीवधारियों के लिए हितकर हैं। किन्तु वास्तव में सभी धर्मों के अनुयायी अधिकतर उनकी सही अनुपालना न कर उन सिद्धांतों के विपरीत आचरण करते हैं। परिणामस्वरूप विभिन्न धर्मावलम्बी परस्पर मतभिन्नताओं के नाम पर संघर्षरत रहते हैं। यहां तक कि विश्व में महायुद्ध भी हुए हैं। महायुद्धों में जो सृष्टि का घोर विनाश हुआ है उसके विगत दो विश्वयुद्ध साक्षी हैं।

जैनधर्म के मूल पांच सिद्धांत हैं- सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अचौर्य तथा अपरिग्रह। ये सभी सिद्धांत बहुत श्रेष्ठ हैं। यदि व्यक्ति इन सिद्धांतों का पालन करें और अपने आचरण में अपनाएं तो समाज और देश में सुख, शांति, प्रेमभाव और सौहार्द सदा स्थायी रूप से बना रह सकता है। जैन धर्म में अहिंसा को परमधर्म माना गया है। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी सत्य और अहिंसा के महान समर्थक थे। सत्यमेव जयते सूत्रवाक्य उनका मूल मंत्र था। सत्य के उद्घाटन के लिए उन्होंने सत्याग्रह का सूत्रपात किया। सत्य के अनेक रूप हैं। गांधीजी मनसा, वाचा और कर्मणा सत्य और अहिंसा को मानते थे। व्यक्ति यदि सच बोलता है तो उसकी आत्मा की शक्ति बढ़ती है और उसे सफलता प्राप्त होती है। बहुधा देखा गया है कि एक झूठ को छिपाने के लिये अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं।

जैनधर्म के मूल पांच सिद्धांत हैं– सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अचौर्य तथा अपरिग्रह। ये सभी सिद्धांत बहुत श्रेष्ठ हैं।

अचौर्य का सिद्धांत बहुआयामी है। अचौर्य का सरल अर्थ है चोरी न करना अर्थात किसी की वस्तु बिना पूछे या बिना उस वस्तु के स्वामी से अनुमति लिए उठा कर ले जाना। चोर किसी व्यक्ति के घर में घुस कर वस्तुओं को चुराकर ले जाता है। अचौर्य का सिद्धांत किसी भी व्यक्ति की वस्तु को चुपचाप उठाकर ले जाने का निषेध करता है। अर्थात् चोरी न करना इस शब्द का अर्थ है। चोरी अनेक प्रकार की होती है। मेरे विचार से यदि कोई विक्रेता ग्राहक को निर्धारित तौल से कम वस्तु देता है तो यह भी चोरी करना है। यदि दूकानदार दण्डी मारकर ग्राहक को कम वस्तु या पदार्थ देता है तो वह अचौर्य के विपरीत आचरण करता है। यदि दूकानदार ग्राहक को कपड़ा कम नापकर देता है तो यह एक प्रकार की चोरी है। चोरी के और भी कई प्रकार के हैं- वस्तु, धन तथा स्वर्ण आदि की चोरी भी इसके अंतर्गत आती है। उदाहरणार्थ यदि स्वर्णकार सोने या चांदी के गहने बनाते समय खालिस सोने या चांदी में मिलावट कर देता है और ग्राहक से खालिस सोने के पैसे लेता है, यह चोरी का ही प्रकार है।

अपरिग्रह के सिद्धांत की अनुपालना अधिकांश लोग अपने जीवन में नहीं करते हैं। आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह करना अपरिग्रह सिद्धांत के विपरीत आचरण करना है। वर्तमान समय में मानवजाति में अनावश्यक वस्तुएं एकत्र करने की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ रही है। हमारा काम तीन या चार जोड़ी पहनने के वस्त्रों से चल सकता है, किन्तु दर्जनों जोड़ी कपड़े बनवाने का चलन चल पड़ा है। इसी प्रकार घर की महिलाएं भी अनेक प्रकार की साड़ियां, ब्लाउज आदि का संग्रह करती हैं। आज मैचिंग के नाम से अनेक प्रकार के बहुरंगी पहनने के वस्त्रों का रिवाज चल पड़ा है। इसी प्रकार अनाज आदि गृहस्थी की चीजों के परिग्रह की प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है। किसी परिवार में तीन बोरी गेहूं से साल भर काम चल सकता है, किन्तु वह परिवार सात या आठ बोरी गेहूं खरीद कर रखता है। इस परिग्रह की प्रवृत्ति से समाज में समान वितरण की व्यवस्था गड़बड़ा जाती है। कुछ व्यक्तियों के पास अनावश्यक वस्तुएं हैं और कुछ लोग उन वस्तुओं से वंचित हैं। और भी बहुत अच्छी बातें है। उदाहरणार्थ व्यसनमुक्त जीवन जिऊंगा, मादक पदार्थों का सेवन नहीं करूंगा, छलपूर्ण व्यवहार नहीं करूंगा, अस्पृश्यता नहीं मानूंगा तथा धार्मिक सहिष्णुता रखूंगा आदि पर सही आचरण करने वाले बहुत कम हैं।

पुनः कहना चाहूंगा कि अन्य सभी धर्मों के सिद्धांत और आचारसंहिता की बातें बहुत महत्वपूर्ण एवं अच्छी हैं। पर उन पर आचरण करने वाले बहुत कम हैं। इसी कारण समाज और देश में भ्रष्टाचार अपने चरम पर व्याप्त है। सिद्धांतों की अनुपालना करने से व्यक्ति और समाज दोनों का भला होगा।

-5-ख-20, जवाहर नगर, जयपुर-302004 (राजस्थान)

जीवन के इर्द-गिर्द

:: डॉ. जे. पी. सक्सेना ::

- **शक्ति मां के दरबार में स्वार्थ-सिद्धि के लिए न जाएं बल्कि भक्ति-भाव से जाएं। सच्ची भक्ति से शक्ति स्वतः प्राप्त हो जाती है और मनोवांछित इच्छाओं की प्राप्ति हो जाती है।**
- **ज्यादा की कामना न करो अन्यथा निराशा ही हाथ लगती है।**
- **सबका मालिक एक है, रूप अनेक हैं, पूजन विधि भिन्न-भिन्न हैं, परन्तु लक्ष्य एक है।**
- **किसी के दुराग्रह पर कोई काम न करें। सदैव वह काम करें जिससे आत्मिक सुख व मानसिक शांति प्राप्त हो।**

-एफ-601, पवित्रा अपार्टमेंट
वसुन्धरा इन्कलेव, दिल्ली-110096

आत्म-विश्लेषण

जनार्दन शर्मा

मिलियन डॉलर मंत्र

अपने साथ भी अपाइन्टमेंट लें

आप अपने साथ बात करने का अपोइन्टमेंट लेते हैं? क्या आप दुनिया की झंझटों से मुक्ति पाकर अपने से भी एकांत-संवाद का समय निकालते हैं? वस्तुत: तनावमुक्ति या परिवार और समाज व राष्ट्र में शांति, मन की शांति एवं आंतरिक ऊर्जा ग्रहण करने का श्रेष्ठ उपाय यही है। एक विद्वान ने कहा है- जैसे भोजन की उपयोगिता उसके पचने में है, उसी प्रकार उत्तम ज्ञान व शुद्ध बुद्धि के लिए ध्यान और एकांत चिंतन की आवश्यकता है। अध्ययन से हमें सूचना मिलती है, किन्तु ज्ञान व बुद्धि का शोधन, जीवन में प्रगति-पथ का दिशा-निर्देश एकांत चिंतन व ध्यान से संभव है। जिसे धर्म-गुरु प्रेक्षाध्यान, विपश्यना या प्राणायाम भी कहते हैं। एकांत-सेवन का महत्व सभी स्वीकार करते हैं।

न्यूयार्क के एक शोध-केन्द्र में छात्रों द्वारा न्यूटन, गुरुत्वाकर्षण एवं सेव की चर्चा के दौरान एक शोधार्थी ने बताया कि हम 'सेव के गिरने' की बात बढ़-चढ़कर करते हैं, किन्तु इस बात पर भी ध्यान दें कि बाग में न्यूटन एकांत-चिंतन में बैठे थे, तभी सेव गिरने से न्यूटन की बुद्धि ने 'गुरुत्वाकर्षण' का आविष्कार किया। हमारे ऋषियों ने पृथ्वी, सूर्य, चंद्रमा, ग्रह-नक्षत्रों की गति की गणना बिना किसी सूक्ष्म दर्शन यंत्र के एकांत-ध्यान के द्वारा ही तय की थी। महात्मा गांधी जब भी तनाव या अनिर्णय की स्थिति में होते तब एकांत बैठकर गीता के श्लोकों का अध्ययन करते और उनके चेहरे पर मुस्कान दौड़ जाती। तनावमुक्त होकर वे दृढ़ निश्चय करते, वही निर्णय इतिहास बन जाता। ब्रिटिश प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल युद्ध के दिनों में भी सप्ताहांत एकांत में जाते तथा दैनिक आराम (एकांतवास) के समय भी डिस्टर्ब न करें, रीति अपनाते थे।

पश्चिम में जहां सप्ताहांत कंट्री-होम यानी 'ग्राम्यकुटी' अवकाश जाने की प्रथा है, वहां हमारे यहां भी व्यस्त जीवनशैली से निकलकर तीर्थ-यात्रा, देशाटन या किसी आध्यात्मिक गुरु के आश्रम में अवकाश या एकांतवास की बात देखी जाती है, जहां से लोग पुन: तरोताजा एवं पुन: ऊर्जा लेकर कार्य क्षेत्र में लग जाते हैं। सभी चिकित्सा-पद्धतियां भी स्वास्थ्य लाभ, मानसिक शांति व सुख हेतु योग, प्राणायाम, ध्यान की सलाह देते हैं।

'तालमूद' में दो हजार साल पहले यहूदी ऋषियों ने अपने उपदेशों में यही बताया है कि दुनिया में शांति व कल्याण के लिए लोगों को काम कम और चिंतन ज्यादा करना चाहिए। इसके मायने निष्क्रियता नहीं है। यह भी कहा है कि अनिर्णय या संदेह की स्थिति में होने पर शांति व एकांत में चिंतन से समाधान निकल जायेगा। चाणक्य ने भी कहा है-व्यक्ति को अपने बारे में समय चक्र, लाभ-हानि, शत्रु-मित्र एवं अपनी आंतरिक शक्ति सामर्थ्य पर बार-बार चिंतन करना चाहिए।

'तालमूद' में दो हजार साल पहले यहूदी ऋषियों ने अपने उपदेशों में यही बताया है कि दुनिया में शांति व कल्याण के लिए लोगों को काम कम और चिंतन ज्यादा करना चाहिए।

आधुनिक आध्यात्मिक एवं योगगुरु भी शिविरों में कहते हैं- हमें अतीत की कैद से मुक्ति पाकर, सबके प्रति पूर्वाग्रह से मुक्त होकर बीति ताहि बिसार दे और भूल जाओ तथा क्षमा करो की नीति अपनाकर भविष्य की संभावनाओं पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। 'आधा गिलास भरा है' की सकारात्मक सोच के साथ किसी भी कार्य के उजले पक्ष की ओर ध्यान देकर मन में उत्साह के साथ कार्य संलग्न होने से थकावट और तनाव दूर होगा तथा कामयाबी व खुशी आपके साथ होगी।

एक विचारक ने कहा है-आप वहीं है जो आपके आंतरिक विचार और आपका सपना है, आप अंतहीन है, अंतरिक्ष की तरह। हमारे ऋषि कहते हैं- हमारा मन शिव-संकल्पवान हो-यानी हमारी आत्मा-अंतरमन सदैव शुभ एवं कल्याण की भावना रखता है। अत: हमें अपने अंतरमन की चुप्पी की आवाज सुननी चाहिए। सबके साथ प्रकृति के साथ एकात्मकता स्थापित करनी चाहिए। इसीलिए उपनिषद में कहा है-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचित जगत्यांजगत।

अर्थात चर-अचर सारा जगत उसी एक परमात्मा से बंधा है। गीता में भी कहा है- हम सब माला के मणियों की तरह गुंथे हैं। इससे आत्मवत सर्वभूतेषु और उदार चरितानांतु वसुदैव कुटुम्बकम के भाव जागृत होंगे। हम ईर्ष्या द्वेष से मुक्त होंगे। इस मन:स्थिति से हम अपने कार्य की सफलता असफलता से विचलित नहीं होंगे-कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन् (कर्म करो फल की चिंता छोड़ो) गीता का संदेश हमारा आदर्श होगा और हमारी निश्छल बुद्धि विलियम कोक की कविता को साकार करेगी-

जंगली फूल के मुखड़े में सौंदर्य निहारना सीखो,
हथेली में अनंत को समेटना सीखो।

इसीलिए योगदर्शनाचार्य पातंजलि योगसूत्र में कहते हैं- ''जब आप महान उद्देश्य से प्रेरित होते हैं, तब आपकी सोच सभी बंधनों से मुक्त होती है, आपका मस्तिष्क सभी सीमाओं को पार कर जाता है और आपकी आंतरिक आत्मानुभूति सभी दिशाओं से अग्रसर होती है, तब आप एक आश्चर्यजनक विश्व में होते है, आपका सुषुप्त बल, मानसिक योग्यता और मेधा जाग जाती है।''

अत: अंतर्मन से तार जोड़ना तनावमुक्ति एवं सुख-शांति का सरल साधन है।

-सत्य सदन, पुष्कर (राजस्थान)

● सुपथ ●

प्रो. मिथिलेश दीक्षित

आस्था के कारण ही मानव, मानव है अन्यथा अन्य प्राणियों और उसमें अधिक अंतर नहीं !

आस्था स्थूल से सूक्ष्म तक पहुंचने का मार्ग

आस्था एक ऐसा आध्यात्मिक भाव है, जो मनुष्य के लिए प्रत्येक स्थिति में अत्यंतावश्यक और मननीय है। यह पूर्णरूप से 'स्थिति' का द्योतक है और सत्य का पर्याय है। यह ऐसा नैतिक प्रत्यय है, जो सृष्टि के साथ एकत्व और समन्वयक की प्रेरणा देता है, सृष्टि की अखण्डता का बोध कराता है, और मानव के पूर्णत्व का प्रतिपादन करता है। भारतीय संस्कृति पूर्णत्व का बोध कराने वाली संस्कृति है, जो स्थूल से सूक्ष्म तक पहुंचने का मार्ग प्रशस्त करती है। आस्था इस संस्कृति का मूल तत्व है। आस्था मानव की सहज प्रवृत्ति है। इसका संबंध नैतिकता से है। परिवर्तन अंदर से होता है। यह आस्थापरक भावबोध से ही संभव है। भाव या विचार से ही कर्म की प्रेरणा मिलती है। कर्म का संबंध धर्म से है और धर्म का संबंध सृष्टि से, केवल एक जाति, क्षेत्र, प्रांत या देश से ही केवल नहीं। आस्था मानव की मूल प्रकृति है और अनास्था निषेधात्मक प्रतिक्रिया। यह प्रतिक्रिया भावनात्मक और क्रियात्मक और बाह्य-सभी प्रकार के प्रदूषण का कारण है। मानवता का पोषण आस्था के बल पर संभव है, अनास्था के द्वारा नहीं। आस्थाबोध से मानव की अंतश्चेतना में गुणात्मक परिवर्तन होता है, जिससे हृदय में उदारता, श्रद्धा, करुणा, प्रेम आदि भाव उत्पन्न होते हैं तथा मन, मस्तिष्क, एकाग्रता, शक्ति और प्रफुल्लता आती है।

आस्था के कारण ही मानव, मानव है अन्यथा अन्य प्राणियों और उसमें अधिक अंतर नहीं है। आस्था का संबंध केवल चरित्र से नहीं, आचरण और व्यवहार से भी है। आस्था ही समग्र प्रगति का कारण है। यह प्रगति चाहे भौतिक क्षेत्र में विज्ञान आदि के द्वारा हो, अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में ज्ञान और अनुभूति के द्वारा अथवा कला, धर्म, दर्शन आदि के द्वारा हो। आस्था से ही सब कुछ संभव है, स्वयं की स्थिति भी, अन्य का अस्तित्व भी, यहां तक कि उस महाशक्ति का अस्तित्व भी, जिससे इस संपूर्ण सृष्टि की स्थिति है। इस प्रकार आस्था कोई नया भाव नहीं है, परन्तु 'आस्थावाद' शब्द अवश्य नवीन है, जो केवल मनोरंजन के लिए या चौंकाने के लिए प्रयुक्त नहीं हो रहा है, अपितु चिरन्तन सत्य का उद्बोधन करने वाला और अपने राष्ट्र के साथ-साथ पूरे विश्व को नयी दिशा, नयी सोच, नया मार्ग, नया प्रकाश प्रदान करने वाला एक उपयोगी माध्यम है। 'आस्थावाद' एक सर्वतोमुखी सकारात्मक आंदोलन है, जो सत्याग्रह की ही भांति राष्ट्र के लिए नैतिक उपलब्धियों का वरदान प्राप्त कराने के लिए है।

जब किसी सद्भाव, सद्विचार की पूरे परिवेश के लिए अत्यंत आवश्यकता होती है, तो उसकी व्यापक व्यवस्था के लिए दृढ़ता के साथ ठोस कदम उठाते हुए प्रचार-प्रसार की भी आवश्यकता होती है। अनास्था का दानव आज सर्वत्र मुंह फैलाये हुए है। इसके विरोध में भी समग्र शक्तियों के साथ हमारा सकारात्मक प्रयास होना चाहिए। यह इस जागृति से संभव है। 'आस्था' शब्द के आगे 'वाद' लगाना कुछ लोगों को भले ही अटपटा लगे, परन्तु यह शुभ संकेत है आज की अपसंस्कृति के परिवेश में कुछ अच्छा और भला होने और कर दिखाने के लिए। आस्थावादी वैचारिक उन्मेष ही वर्तमान में सबसे सशक्त हथियार हो सकता है और आस्थापरक लेखन ही भावात्मक और अहिंसक क्रांति का शंखनाद बन सकता है।

वर्तमान समय में अभौतिकवादी सोच, यांत्रिकता का बढ़ता प्रभाव, पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण, सभी प्रकार के मानवीय मूल्यों का विघटन, साहित्य, शिक्षा आदि का व्यावसायीकरण आदि तथ्य आस्थावान रचनाकार को व्यथित कर रहे हैं। मनुष्य अनास्थापरक मानसिकता से ग्रस्त हो रहा है। आस्थावाद जैसे शांतिप्रद आंदोलन की अब अधिक आवश्यकता है। भोगवादी, अवसरवादी वर्तमान व्यवस्था के प्रति यह एक चुनौती भी होगी।

आस्था के बिना अस्तित्व नहीं। अनास्था के कारण अस्तित्व खण्डित हो रहे हैं, व्यक्तित्व खण्डित हो रहे हैं, स्वस्थ मान्याताएं खण्डित हो रही हैं। संपूर्ण राष्ट्र में ऐसा बवंडर उठ रहा है कि समाज, साहित्य और राजनीति के बड़े-बड़े कर्णधार भी डगमगा रहे हैं। क्षणिक प्राप्ति के लिए समय और शक्ति लगा देते हैं दांव पर लोग। जिधर बहुमत, उधर विश्वास। उचित-अनुचित के बोध का सर्वथा अभाव। जिसकी लाठी, उसकी भैंस वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। सरलता और सुगमता का मार्ग तलाशते हैं लोग। आस्था का मार्ग निर्भयता, साहस, दृढ़ता और निष्ठा का है। अतः संघर्ष और कठिनाइयों का भी है। सामान्यजन में धैर्य की कमी होती जा रही है। राजनीति में भ्रष्टाचार, अनास्था के कारण ही पनप रहा है। धर्म के क्षेत्र में कुरीतियां और ढोंग फैले हुए हैं। समाज से क्षेत्रीयता और जातीयता का जहर उतर नहीं रहा।

आस्थावाद में गुटबाजी और खेमेबाजी की गुंजाइश नहीं। जितने भी मानवीय मूल्य हैं, सभी का समावेश साहित्य में होना चाहिए। सच्चा साहित्यकार समाज का मार्गदर्शक भी होता है। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब, प्रतिरूप या दर्पण ही नहीं, उसके निर्माण की निरंतर कोशिश भी है। समाज के मानवीय मूल्य साहित्य के मूल विषय होते हैं। साहित्य वह कसौटी है, जिसके द्वारा समाज के परिवर्तन के यथार्थ को आंका जा सकता है। बंधी-बंधाई शास्त्रीय परम्परा की प्रासंगिकता वहीं तक माननी चाहिए, जहां तक मानवीय मूल्यों में किसी प्रकार का व्याघात न आये और समाज की बदलती धारा में विच्छिन्नता न आए। आस्थावाद किसी बंधी-बंधायी परिपाटी का नाम नहीं है। तुलसी, कबीर से लेकर प्रसाद, दिनकर, भवानी प्रसाद मिश्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि के द्वारा विभिन्न स्रोतों से प्रवाहित होती आ रही भावधारा की ही आगे की सुखद यात्रा है यह, जिसमें सत्साहित्य के लिए प्रेरणा, संदेश और संभावनाएं हैं।

–जी-91-सी, संजय गांधी पुरम, लखनऊ-226016

चिंतन

साध्वी अणिमाश्री

जब विचार विधेयक होते हैं, तब व्यक्ति के मन में प्रेम, करुणा, साहस, आत्मविश्वास, आशा, उत्साह, प्रफुल्लता आदि मानवीय गुणों की सहज अभिवृद्धि होती है तथा ये गुण व्यक्ति के मन–मस्तिष्क पर बहुत अनुकूल प्रभाव छोड़ते हैं।

जीवन का परिष्कार करते उदार विचार

मन और चेतना पर समान रूप से आधिपत्य स्थापित करने में विचार एक सेतु का काम करते हैं। व्यक्ति के विचार, भावधारा, चिंतन–ये नियामक तत्त्व हैं। जब ये प्रशस्त दिशा में बहते हैं तब व्यक्ति सर्वांगीण व्यक्तित्व निर्माण की दिशा में प्रस्थित हो जाता है और जब इन पर कलुषता की परत आ जाती है तब ये व्यक्ति को पतन की ओर जबरन धकेल देते हैं। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए विश्व विख्यात मनश्चिकित्सक एच. एफ. डनबार ने कहा है कि जिनका अंतराल और मन: संस्थान उदात्त भावनाओं, सद्विचारों से संभृत है। प्रसन्नता और प्रफुल्लता जिनका स्वभाव है। ऐसे व्यक्तियों का शरीर स्वस्थ रहता है और चेहरे की आभा निराली ही होती है।

व्यक्ति की विचारधारा जैसी होती है, उसका व्यक्तित्व भी तद्नुरूप वैसा ही बनता चला जाता है। भावधारा की उत्कृष्टता व्यक्ति के व्यवहार को समुन्नत बनाती है और उसकी प्रगति का पथ भी प्रशस्त करती है। कहते हैं कि संक्लिश्यमान भावना की नाव में आरूढ़ व्यक्ति दु:ख के सागर को तर नहीं सकता। वह खुद अवनति और अपकर्ष के मार्ग का उद्घाटन करता है। सोवियत संघ की एकेडमी ऑफ साइंसेज के वरिष्ठ सदस्य तथा स्नायु विज्ञान के प्रोफेसर पावेल सिमोनोव के मंतव्यानुसार मनुष्य के विचार दो धाराओं में प्रवहमान रहते हैं। एक धारा विधेयात्मक एवं दूसरी निषेधात्मक होती है।

जब विचार विधेयक होते हैं, तब व्यक्ति के मन में प्रेम, करुणा, साहस, आत्मविश्वास, आशा, उत्साह, प्रफुल्लता आदि मानवीय गुणों की सहज अभिवृद्धि होती है तथा ये गुण व्यक्ति के मन–मस्तिष्क पर बहुत अनुकूल प्रभाव छोड़ते हैं। जब निषेधात्मक भावों की तरंगें बहने लगती हैं तब काम, क्रोध, ईर्ष्या, भय, शोक, चिंता, अकर्मण्यता, आलस्य आदि के प्रभाव से व्यक्ति का तन–मन उद्वेलित हो जाता है। यह उत्तेजना एक विचित्र प्रकार का क्षोभ पैदा करके व्यक्ति को तनाव की स्थिति में पहुँचा देती है।

यद्यपि ऋषि–महर्षियों ने यह अनुभव किया है कि मनुष्य मूलत: पवित्र और परिष्कृत विचारों का अलौकिक पुंज है। ये गुण उसमें अंतर्निहित हैं किंतु कई बार अनुपयुक्त और प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण उसके विचारों में विकृति आ जाती है और न चाहते हुए भी विषाक्त वातावरण निर्मित हो जाता है। इसका दुष्परिणाम मनोकायिक आधि–व्याधियों के रूप में उसे भुगतना भी पड़ता है। कहते है। कि व्यक्ति के विचार जितने संकुचित होते हैं वह शारीरिक, मानसिक और आत्मिक दृष्टि से भी उतना ही कमजोर होता चला जाता है। विचारों की उदारता और उज्ज्वलता जीवन को स्वस्थता ही प्रदान नहीं करती अपितु उसे समुन्नत एवं परिष्कृत भी बनाती है। सफलता और सम्मान हर मंजिल पर उसकी अगवानी करते हैं। जन–भावना सदैव उसके अनुकूल बनी रहती है।

मलिन भावधारा विष तुल्य बनकर जीवनी–शक्ति का अनावश्यक क्षरण करती है और इच्छाशक्ति को कुंठित कर देती है। व्यक्ति के भीतर एक अद्भुत शक्ति है, जिसको ऋषि–मुनियों ने संकल्प की अभिधा से अभिहित किया है। शुभ संकल्प के द्वारा अपने भावों, विचारों और व्यवहारों में आमूल–चूल परिवर्तन करके नई चेतना का जागरण किया जा सकता है। उदारता और पवित्रता से आप्लावित संकल्प वाले व्यक्ति का व्यवहारिक धरातल भी अत्यंत गरिमापूर्ण तथा सहनशीलता से ओत–प्रोत होता है। संत तुकाराम के जीवन का यह घटना–प्रसंग यहाँ मननीय है।

कहते हैं संत तुकाराम की पत्नी उग्र स्वभाव वाली महिला थी। उसके जीवन–व्यवहार में कर्कशता को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता था। अन्य की तो बात ही क्या? वह अपने पति के साथ भी कर्कशता का बर्ताव करती हुई नहीं हिचकती थी। फिर भी वे सदैव मुस्कुराते ही रहते थे। क्रोध या प्रतिशोध के भाव उन्हें कभी छू भी नहीं पाते थे। एक दिन एक किसान ने उन्हें गन्नों का एक गट्ठर दिया। वे उसे सिर पर रखकर घर आ रहे थे। मार्ग में मिलने वाले उनसे अपने लिए एक–एक गन्ने की माँग करते रहे और उदारमना संत प्रत्येक माँगने वाले को एक–एक गन्ना देते चले आए। अंत में एक गन्ना शेष रह गया वह लाकर उन्होंने पत्नी को दे दिया। पत्नी को गन्ने का गट्ठर मिलने की सूचना पहले ही मिल चुकी थी। एक गन्ने को देखकर वह उबल पड़ी और संत की पीठ पर पूरी ताकत के साथ मारा। गन्ने के दो टुकड़े हो गए। संत शांत रहे। दो क्षण के बाद खामोशी को तोड़ते हुए सस्मित उन्होंने कहा–घर में हम दो ही सदस्य हैं अत: गन्ने को तोड़ना ही था। तुमने जल्दी ही इस कार्य को पूरा कर लिया, यह बहुत अच्छा हुआ। लो यह बड़े वाला टुकड़ा तुम ले लो। मैं छोटा टुकड़ा ले लेता हूँ। जिस किसी ने भी इस घटना को सुना वह नतमस्तक हो गया। मुख–मुख पर यही चर्चा थी कि अगर एक पक्ष अनुपयुक्त हो तो दोष का परिमार्जन करने के लिए दूसरे पक्ष का यह शिष्ट और विशिष्ट व्यवहार बदलाव की भूमिका का निर्माण कर सकता है।

जीवनशैली सुषमा सुघड़ और सुमधुर व्यवहारों से ही वृद्धिगत होती है। यह तभी संभव हो सकता है जब व्यक्ति की सोच सकारात्मक हो। विधेयक सोच के बिना जीवन–व्यवहार समुन्नत बन ही नहीं सकते। व्यक्ति अपनी परिष्कृत सोच के द्वारा ही स्वयं को समुन्नत बना सकता है और अपनी सुप्त चेतना को जगाकर जागरण का शंखनाद कर सकता है। ■

अंक विज्ञान

नीता बोकाड़िया

न्यूमरोलॉजी में नंबर 9 का महत्व

ऊर्जावान, हिम्मती, आत्मविश्वासी, अहंकारी नंबर-9 विरोधाभासों से भरा है। इस अंक के मालिक मंगल की बाकी ग्रह इज्जत करते है बावजूद इसके ज्योतिष इसे दुष्ट प्रवृत्ति का मानते है। 9 नंबरी अपनी स्पष्टवादिता से लोगों की भावनाएं भले आहत करें, दूसरों से वे अपने लिए स्नेह और सहानुभूति की ही उम्मीद रखते हैं।

किसी भी महीने की 9, 18 और 27 तारीख को जन्मे लोगों का मालिक 'मंगल' ग्रह है। मंगल को देवताओं के समूह का प्रमुख माना जाता है। सभी 9 ग्रह इसकी इज्जत करते हैं। इस नंबर के लोग हिम्मती और आत्मविश्वास से भरपूर होते हैं। ज्योतिषियों की नजर में मंगल दुष्ट प्रवृत्ति का ग्रह है, क्योंकि इसके प्रभाव वाले लोग अहंकारी होते हैं जो अपनी इच्छाओं को दूसरों की इच्छा से ऊपर मानते हैं। यह अंक शक्ति, ऊर्जा, विध्वंस व युद्ध का प्रतीक है। मंगल के प्रभाव से इन तारीखों को पैदा हुए लोग गुस्सैल, बहसी, बेचैन, अस्थिर, क्रूर व हिंसक होते हैं। यह किसी को भी हानि पहुंचा सकता है और विवाहित जीवन में मुश्किलें पैदा करता है।

सूर्य, चंद्र और गुरु मंगल के दोस्त हैं और बुध और राहु दुश्मन। इन नंबर-9 के लोग मार्शल आर्ट, शिकार, खेल, वाद-विवाद और राजनीति के क्षेत्र में अच्छी दखल रखते हैं। अग्नि और ताप का स्वामी ग्रह होने के नाते मंगल ऐसी ऊर्जा का संचार करता है जिसे संभाल पाना बहुत मुश्किल है। इस ऊर्जा की वजह से लोग बेचैन और हमेशा क्रियाशील रहते हैं। ये लोग महत्वाकांक्षी और दृढ़ इच्छाशक्ति वाले होते हैं। इसलिए किसी भी क्षेत्र में सबसे ऊपर रहने की कोशिश करते हैं। ये लोग स्वतंत्र, हावी रहने वाले और स्पष्टवादी होते हैं। स्नेह और सहानुभूति पाने के लिए ये किसी भी हद तक जा सकते हैं।

कुछ खास नंबर-9 की हस्तियां

सोनिया गांधी	– 9 दिसम्बर
मदर टेरेसा	– 27 अगस्त
डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी	– 9 नवम्बर
सलमान खान	– 27 दिसम्बर
अक्षय कुमार	– 9 सितम्बर

अंक-9 के अंतर्गत जन्म लेने वाले व्यक्ति बहुधा आग और विस्फोटक पदार्थों से होने वाली दुर्घटनाओं के शिकार होते हैं और प्रायः शारीरिक क्षति उठाते हैं। इनके जीवन में अनेक शल्य चिकित्साएं होती है। अंक-9 ऐसी प्रकृति का द्योतक है जिसका कभी विनाश नहीं हो सकता, इसलिए समस्त अंकों में अंक-9 को एक विशेष स्थान प्राप्त है। अंक-9 ही एकमात्र ऐसा अंक है, जिसे किसी भी संख्या से गुणा किया जाए उसका परिणाम 9 की श्रृंखला में आयेगा। जैसे-

9 ग 3 = 27 (2 + 7 = 9)
9 ग 5 = 45 (4 + 5 = 9)
9 ग 7 = 63 (6 + 3 = 9)

इसलिए इन व्यक्तियों में नेतृत्व शक्ति, संगठन पैदा करने की शक्ति, लोगों से काम लेने की शक्ति गजब की होती है।

कुछ महत्वपूर्ण तथ्य

सर्वप्रमुख दिन	–	मंगलवार
भाग्यशाली रंग	–	लाल, गुलाबी
ईष्टदेव	–	हनुमानजी
व्रत का दिन	–	मंगलवार

-मो. 09920374449
E-mail: neettakbokaria@hotmail.com

व्यापक दृष्टि चाहिए जीवन के प्रति

राजीव मिश्र

आधुनिकता की चकाचौंध में भटकी नई पीढ़ी जीवन की मुख्यधारा से कट गई है। नई पीढ़ी में संस्कारों का सिंचन नहीं हो पा रहा है। संस्कारों के पोषण से ही मनुष्य में धर्म तथा मानव के गुणों का विकास होता है।

आधुनिकता के नकली प्रदर्शन में फंसी युवापीढ़ी बाह्यजगत को तो समझ पा रही है लेकिन उसका भीतरी जागरण खो गया। मस्तिष्क प्रधान युवा पीढ़ी हृदय की भावना का मूल्य नहीं समझ पा रही। उसे यह नहीं मालूम कि जिस जीवन में हृदय की विशालता नहीं, संवेदनशीलता नहीं, भावना का कोई मूल्य नहीं, वह जीवन स्वार्थी हो जाता है।

आवश्यकता से अधिक सुख-साधन जीवन को नरक की ओर धकेलता है। यह धर्म की दृष्टि से पाप भी है। निर्धन का अधिकार छीनकर मोह-ममता में पड़े माता-पिता अपनी संतानों को बिगाड़ रहे हैं। ऐसे रास्ते से भटक गई युवापीढ़ी मादक पदार्थों का शिकार भी बन रही है। दूसरी ओर निर्धन वर्ग के बच्चे अभाव में जीते हैं तथा अशिक्षित ही रह जाते हैं। एक व्यक्ति पांच सितारा होटल में खाना खा रहा है तो दूसरे के पास दो समय की रोटी भी नहीं है। यह समाज के बिगड़े हुए रूप का चित्र है।

जिन परिवारों में भौतिक समृद्धि है वे अपने बच्चों को इतनी अधिक सुविधाएं दे देते हैं कि बच्चा पुरुषार्थी बन ही नहीं पाता। उसे संघर्ष करना ही नहीं सिखाया जाता। उसे तो केवल शरीर से सुंदर दिखना चाहिए। बाहरी पोशाक आकर्षक हो। जिसके पास बचपन से ही सुख-सुविधाएं हो वह कैसे पराक्रमी, योद्धा, धैर्यवान, चरित्रवान तथा कर्मठ बन सकता है? यदि बच्चों को संस्कारित किया जाए तो वह अपने पुरुषार्थ के बल पर तथा सदाचार, चारित्र तथा अनुशासित रहकर भौतिक स्तर पर स्वयं ही ऊपर उठ जायेगा। उसे धन-दौलत तथा आवश्यकता से अधिक सुख-सुविधाएं देने की जरूरत नहीं पड़ती। मनुष्य अपनी अज्ञानता के कारण ही नई पीढ़ी को नपुंसक बना रहा है।

जीवन के प्रति व्यापक दृष्टि की आवश्यकता है। जीवन की भौतिकवादी विचारधारा को आध्यात्मिक आधार मिल जाए तो जीवन में पूर्णता आ जाए। जीवन में शोक, रोग, भय तथा तनाव सब समाप्त हो जाए। फिर जीवन में संतुष्टि तथा आराम के लिए किसी को नींद की गोली तथा नशे का शिकार न बनना पड़े।

-245-बी, बाघम्बरी हाउसिंग स्कीम
इलाहाबाद-21106 (उ.प्र.)

कविताएं

माँ

डॉ. श्रीगोपाल नारसन

सुबह उठते ही
सोचता हूं
कैसे हो कमाई
कैसे मिले
बड़ा सा पद
जो मुझे बड़ा बना सके
दूसरों से
अलग दिखा सके
इसी प्रयास में
दिन–रात फिरता हूं
मैं मारा–मारा
मैं बड़ा बना भी
दूसरों से अलग दिखा भी
लेकिन मेरी
ओर बड़ा बनने की
चाहत बढ़ती गई
तभी एक दिन
मैंने मां को
खुश होते देखा
बहन के
पास होने की खुशी में
मेरी नौकरी
लगने की खुशी में
मैं समझ गया
मां बड़ी है, सबसे बड़ी
जो शीर्ष पर खड़ी है
जिसके सामने
हम बौने है
मां पूर्ण है
हम बौने है।

–पो.बा.नं. 81, 460–बी,
गीतांजलि विहार, गणेशपुर,
रुड़की (उत्तराखण्ड)

गीतिका

रमेशचंद्र शर्मा 'चंद्र'

जबसे उनसे प्यार हुआ
जीवन ही दुश्वार हुआ
मंदिर–मस्जिद मध्य खड़ा
दोनों ओर प्रहार हुआ
भूखे को जो रोटी दे
वह मजहब स्वीकार हुआ
बाजारों में जा बैठे
घर भी अब बाजार हुआ
कौन चाहता बंजर को?
उपजाऊ से प्यार हुआ
खबरें छपती कोनों में
विज्ञापन? आधार हुआ
तूने समझा तेरा है
किसका यह संस्कार हुआ
अर्थ बदलते नातों के
धन जीवन का सार हुआ
हाथ मिलाकर चल देते
अवसर का व्यवहार हुआ।

–डी–4, उदय हाउसिंग
सोसायटी, बैजलपुर,
अहमदाबाद–380015
(गुजरात)

आत्मबल

अमृत घायल

राह नहीं मिली तो राह बना लेंगे,
क्या हम ऐसे ही घबड़ाकर मन में ही मर जायेंगे।
किस ने कहा कि खाली हाथ मरेंगे।
दुनिया के दिल के चारों छोर भर जायेंगे,
भले ही रूठा, नहीं डरने वाले दुर्दिन से।
वे क्या कर सके हैं, वे क्या कर लेंगे।
मन में विचार क्या है? अविराम अनेक दीपक हैं,
आंधियों में भी प्रकाश भर जाने वाले।
एक आत्मबल हमारे दु:ख मात्रा की दवा है,
हर जख्म को नजर से टांके भर देंगे।
स्वयं विकास हैं, स्वयं विनाश हैं,
स्वयं खिलेंगे, स्वयं झड़ जायेंगे।
समझ क्या रखा है हमें, स्वयं प्रकाश हैं।
दीपक नहीं हम कि बुझाये बुझ जायेंगे
अरे काल नहीं है भय, कर ले जो मरजी कर ले।
ईश्वर जैसा नाथ है, थोड़े ही हैं मरनेवाले।
यांत्रिक है यह जमाना सपफल होता है गतिशील,
वह जमाना लद गया सोचकर कदम उठाने का।
दुनिया क्यों हमें व्यर्थ ही मिटा रही है?
यह चोला भी हम खुद खालीकर जायेंगे।

अनुवादक : डॉ.रजनीकांत एस. शाह

–2, शीलप्रिय, विमल नगर सोसायटी
नवा बाजार, करजण
जिला–वडोडरा–391240 (गुजरात)

सत्य और असत्य

विद्या वाचस्पति डॉ. विद्या विनोद गुप्त

असत्य और सत्य दो भाव जगत में, एक जड़ और दूसरा चेतन।
बनता महान मानव सत्य से, असत्य बनाता केवल दुर्जन।।

दीन हीन दुर्बल होकर भी, सत्य प्रिय गांधी बने महान।
असत्य दृष्टि तो क्रूर बनाती, रावण कुंभकर्ण जैसे बलवान।।

अंतर्मन में संवेदन शक्ति, देती है केवल सत्य दृष्टि।
असत्य दृष्टि अनिष्ट ही करती, नष्ट करती सुंदर सृष्टि।।

सुंदर में विकृति पैदा कर, असत्य कहाता केवल पाषाण।
सत्य सदा शिव होता है, करता रहता नित्य कल्याण।।

सत्यनिष्ठ हो जाने से, प्राणों में भरता स्वाभिमान।
इच्छा क्रिया योजना से दृढ़, सत्य कहाता है भगवान।।

–सावित्री साहित्य सदन, 5/7, सरदार पटेल मार्ग
चाम्पा–495671 (छत्तीसगढ़)

गज़ल

हस्तीमल हस्ती

होती सीधी सादी चुप
मगर बहुत भरमाती चुप

जब सच कहना होता है
लग जाती है सबकी चुप

जैसे राज़ छुपाती है
राज़ अयां भी करती चुप

दुनिया तो दुनिया 'हस्ती'
ऐन वक्त पे तुम भी चुप

काम कई कर जाती है
'हस्ती' एक अकेली चुप

–28, कालिका निवास, नेहरू
रोड, सांताक्रुज (पूर्व)
मुम्बई–400050 (महाराष्ट्र)

राह

करुणा कोठारी

जीवन की राह में सृष्टि की चिर परिचित
डावाडोल परिस्थितियों में
खड़ी रही जीवन के दोराहे पर,
जहां एक राह मुझे
स्वछंदता के आसमान की ओर ले जाती
जहां में बेशुमार लाइट की रोशनी में
माया जाल में जगमगाती...
और दूसरी राह मुझे जिम्मदारियों के
दावानल में ले जाती जहां,
जिम्मेदारियों के बोझ तले खुद के
अस्तित्व को तलाशती रहती...
पर मुझे निर्माण करना है
जो स्वछंदता और बंधन से अलग
स्वतंत्रता की राह हो...
जहां विकास कर सकूं स्वयं का
कर पाऊ अपने सपनो को सच
और मिल जाये मुझे जीवन का
निर्मल आनंद।

–25/26/27, शैलेश इंडस्ट्रीज
इस्टेट नं. 4, टेलीफोन एक्सचेंज के
नजदीक, नवघर रोड, वासी (ई)
थाने–401210 (महाराष्ट्र)

गज़ल

जिया जमीर

बात कहूं मैं यार सुन गर तू दे अधिकार
बिन तेरे जीवन मुझे लगता है बेकार
तुझ पर यूं पथराव है सुन ऐ मेरे यार
मैं ठहरा कांटों भरा तू ठहरा फलदार
मैं मीरा तू श्याम है मेरा सच्चा प्यार
खुद पर मिटने दे मुझे इतना कर उपकार
लब उसके खामोश थे चुप था मेरा यार
आंखों आंखों कर गया लेकिन सब इज़हार
तेरे हर सुख का बनूं जीवन भर आधार
इतना मुझको मान दे इतना दे अधिकार
तुझसा जब है रहम दिल उसका पालनहार
फिर क्यों रहता है दुखी मालिक यह संसार
ममता मां की मिल गयी मिला पिता का प्यार
सब कुछ तूने दे दिया रब तेरा आभार

–जेड बुक डिपो के नजदीक
चौकी हसन खान, मुरादाबाद–244001 (उ.प्र.)

आस्था का मौन

मुनि सुखलाल

पत्थर का टुकड़ा ही तो था वह,
अनघड़ और लम्बा–सा।
कलाकार ने अपने कलेजे में से निकालकर
गांधी को
उसमें बिठा दिया।

दिन–भर करते रहे बातें
सदाचार की, संयम की।
शाम को बढ़ने लगे उनके चरण
मधुशाला की ओर।
मैंने पूछा–आप?
उन्होंने कहा–
हां, मैं आधुनिक युग में जीता हूं।

शराब तो उन्होंने पी
नशा आया हमें।
उसी आवेग में
इतना विरोध किया उनका
कि, वे होश में आ गए
हम बेहोश हो गए।

संशय की खंडित प्रतिमा को
मत बिठाओ मंदिरों की वेदी पर।
उसके पास शब्द हैं।
वे नहीं रह सकते कोलाहल किए बिना।
पिफसल जायेगी श्रद्धा की दृष्टि
तर्क के संगमरमरी पफर्श पर।
मत घबराओ आस्था के मौन से।
प्रबुद्ध पुजारी कर सकता है
मौन के हर इशारे की
संगत व्याख्या।

लक्ष्य की ओर चल

नरेश कुमार 'उदास'

लक्ष्य की ओर निरन्तर चल
पानी बहता है कल–कल
तेरे इरादे हैं तेरा बल
मिलेगा तुझे अवश्य मेहनत का पफल।
नहीं कभी भी किसी को छल
हमेशा सीधे रास्ते चल
मुसीबतों में तपकर निकल
गिर–गिर कर संभल।
न मन को कर अति विकल
इरादे तेरे बस रहें अटल
अवश्य आएगा सुनहरा कल
निरन्तर लक्ष्य की ओर चल।

–हिमालय जैव संपदा प्रौद्योगिकी संस्थान
पालमपुर–176061 (हिमाचल प्रदेश)

चंद छंद

किशनलाल शर्मा

(1) मौन

जब कहने को कुछ न हो
तब मौन रहना अच्छा है
बोलने से मना कब किया है
लेकिन सोच समझकर बोलना अच्छा है
पफालतू की बक–बक, कभी भी
करा सकती है दंगा–पफसाद
इसलिए चुप रहकर, दूसरे का
दिल टटोलना अच्छा है।

(2) परिवर्तन

पेड़ों से पुराने पत्ते झड़कर
नये पत्ते आ गये हैं, नये पत्तों में
पेड़ कितने हसीन और खिले खिले
लग रहे हैं, प्र ति का नियम है परिवर्तन
परिवर्तन कभी भी बुरा नहीं होता
इससे जिंदगी में नया जोश, नई उमंग
भर जाता है जो कुछ नया
करने की प्रेरणा देता है
परिवर्तन हमेशा सकारात्मक होता है
उन्नति, प्रगति की राह खोल देता है
प्रकृति से सीख लो और
हमेशा परिवर्तन को तैयार रहो।

(3) त्याग

सीता के त्याग, पतिव्रता धर्म की
दुहाई देते हैं हम, लेकिन
असली त्याग तो उर्मिला ने
किया था जो पति को भाई के
साथ जाने की इजाजत देकर
घर में वनवास झेला था क्या
आज कोई औरत ऐसा कर सकती है?

–103, रामस्वरूप कॉलोनी
आगरा–282010 (उ.प्र.)

● रहस्य ●

महोपाध्याय ललितप्रभ सागर

चमत्कारी एवं संकटमोचक है नाकोड़ा तीर्थ

राजस्थान की मरुधरा पर निर्मित नाकोड़ा तीर्थ महिमा मंडित पुण्यमयी गरिमा को लिये हुए है। यह सर्वमान्य बात है कि इस तीर्थस्थली पर श्रद्धालुओं द्वारा इतना कुछ न्यौछावर किया जाता है कि यहां की आय से न केवल अन्य छोटे-मोटे तीर्थों की व्यवस्था संचालित होती है, वरन् अनेकानेक विद्यालय, महाविद्यालय, चिकित्सालय, धर्मशालाएं भी निर्मित एवं संचालित हो रही हैं। भगवान श्री पार्श्वनाथ एवं तीर्थरक्षक अधिष्ठायक श्री भैरवजी महाराज की महिमा इतनी जग-विख्यात है कि भक्तों द्वारा इन्हें 'हाथ-का-हजूर' और 'जागती-ज्योत' माना जाता है। यहां के हजारों चमत्कारी प्रसंग हैं। यहां के नाम से की गयी मनोकामना पूरी होती है। आम जनता की यह मान्यता है कि यहां पर चढ़ाया गया प्रसाद तीर्थ के संभाग के अंतर्गत ही वितरित कर देना चाहिए। तीर्थ के परिक्षेत्र से प्रसाद को कहीं ले जाना उचित नहीं माना जाता।

ऐतिहासिक संदर्भों के अनुसार नाकोड़ा का संबंध विक्रम पूर्व तीसरी शताब्दी में हुए नाकोरसेन नामक व्यक्ति से है। नाकोरसेन ने ही नाकोर नगर बसाया था, जो आगे जाकर नाकोड़ा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। नाकोरसेन ने यहां एक मंदिर बनवाया था, जिसकी प्रतिष्ठा आचार्य स्थूलिभद्र के करकमलों से संपन्न हुई थी।

नाकोड़ा तीर्थ पर कई महान आचार्य एवं नरेश यात्रार्थ आए, जिनमें आचार्य सुहस्तिसूरि, सिद्धसेन दिवाकर, मानतुंगाचार्य, कालकाचार्य, हरिभद्रसूरि और राजा सम्प्रति तथा राजा विक्रमादित्य के नाम उल्लेखनीय हैं। जैनाचार्यों ने इन नरेशों के द्वारा इस तीर्थ का जीणोद्धार भी करवाया था। बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी में इस तीर्थ पर मुस्लिम शासकों के आक्रमण भी हुए, जिसमें मंदिरों को भारी क्षति पहुंची। पन्द्रहवीं शताब्दी में तीर्थ का पुनः निर्माण हुआ।

अभी भगवान श्री पार्श्वनाथ की जो प्रतिमा प्रतिष्ठित है, उसका प्रतिष्ठापन सं. 1429 में हुआ। एक मान्यता के अनुसार यह प्रतिमा नाकोर नगर से प्राप्त होने के कारण यह नाकोड़ा पार्श्वनाथ के रूप में प्रसिद्ध हुई, जबकि प्राचीन परम्परागत किंवदंती के अनुसार जिनदत्त नामक श्रावक द्वारा सिणधरी गांव के पास एक सरोवर से इसे प्राप्त किया गया था और आचार्य श्री उदय सूरि के करकमलों से इसकी प्रतिष्ठा संपन्न हुई थी। यहां के प्रगट प्रभावी अधिष्ठायक देव श्री भैरवजी महाराज हैं, उनकी स्थापना सं. 1511 में आचार्य कीर्तिरत्नसूरि द्वारा की गई थी। नाकोड़ा भैरव की स्थापना के बाद तीर्थ की निरंतर समृद्धि होती रही। यहां के चमत्कार जनमानस में घर करते गये। देश-देशान्तर से श्रद्धालु आते रहे। समय-समय पर तीर्थ का नवनिर्माण और जीर्णोद्धार भी होता रहा है।

सतरहवीं शताब्दी तक तीर्थ पर जैनों की विपुल जनसंख्या रही, किन्तु बाद में यहां के निवासी नाकोड़ा के समीपवर्ती अन्य गावों तथा नगरों में जाकर बस गए।

भारत के कोने-कोने से प्रतिदिन सैकड़ों-हजारों यात्रियों का यहां पहुंचना, अपने व्यवसाय तक में नाकोड़ा भैरव के नाम से भागीदारी रखना भैरव देव के प्रति अनन्य श्रद्धा का परिचायक है। पौष कृष्णा दशमी, जो

भगवान पार्श्वनाथ की जन्मतिथि है, को यहां विराट मेला आयोजित होता है। मूल मंदिर के आस-पास छोटे-बड़े कई अन्य मंदिर भी हैं। मंदिर के दायीं ओर सांवलिया पार्श्वनाथ की भव्य प्रतिमा विराजमान है। इस कक्ष में मां सरस्वती, दादा जिनदत्त सूरि, आचार्य कीर्तिरत्नसूरि आदि की प्रतिमाएं भी प्रतिष्ठित हैं। मूल मंदिर के पृष्ठ भाग में भगवान आदिनाथ का भव्य मंदिर है। इस मंदिर का परिकर अत्यंत कलात्मक है।

मूल मंदिर के बाहर दायीं ओर श्री शांतिनाथ भगवान का भव्य मंदिर निर्मित है, जहां भगवान श्री पार्श्वनाथ एवं शांतिनाथ के पूर्वभव संगमरमर पर उत्कीर्ण हैं। मूल मंदिर के बाहर भगवान श्री नेमिनाथ की दो प्राचीन प्रतिमाएं ध्यानस्थ मुद्रा में खड़ी हैं। प्रतिमा की सौम्य मुखाकृति को देखकर मन मंत्र-मुग्ध हो जाता है। इसी मंदिर में दादा जिनदत्त सूरि की प्राचीन चरण-पादुकाएं प्रतिष्ठित हैं। मंदिर के पृष्ठ भाग में छोटा, पर खूबसूरत सिद्धचक्र मंदिर है। यात्रियों की सुविधा के लिए विशाल भोजनशाला के अतिरिक्त तीर्थ के परिसर के बाहर महावीर कला मंदिर, दर्शकों का मन मोहता है, जहां भगवान महावीर के जीवन से संबंधित प्रेरणादायी एवं नयनाभिराम भव्य चित्रों का आकलन हुआ है। चमत्कार और संकटमोचन के लिए नाकोड़ा तीर्थ जन-जन का आराध्य केन्द्र है। नाकोड़ा भगवान का स्मरण जीवन-पथ को निर्बाध प्रशस्त करता है। ■

धर्मग्रंथ

आचार्य डॉ. चंद्रभूषण मिश्र

रामायण में आध्यात्मिक चेतना

अध्यात्म अपने आप में गंभीर शब्द है, जिसका प्रारंभ 'अधि' उपसर्ग के साथ हुआ है। अधि उपसर्ग का अर्थ भीतर प्रवेश करना अर्थात आत्मा तक की यात्रा- आत्मिक ज्ञान, 'अद्य दीपो भव' आदि है। तब भगवत्पाद आद्य शंकराचार्य से शिष्यों ने पूछा 'संसार हृतकः' संसार को हरण करने वाला कौन है? तब प्रभु ने कहा, श्रुति-जात्मबोधः, वेद उपनिषदों से उत्पन्न आत्मज्ञान ही संसार को हरने वाला है। देवर्षि नारद द्वारा प्रदत्त 'राम-राम' मंत्र के उलटा 'मरा-मरा' जपने पर भी वाल्मीकि ऋर्षि बन गये थे।

जान आदि कवि नाम प्रतापू,
भयउ शुद्ध करि उलटा जापू।

भगवान शंकराचार्य तो विद्या का मुख्य उद्देश्य ब्रह्म-गति ही मानते हैं तथा आत्मबोध को ही विमुक्ति। सबसे बड़ा लाभ आत्मज्ञान ही है।

विद्या हि का ब्रह्मगति प्रदाया
बोधो हि को यस्तु विमुक्ति हेतुः।
को लाभ आत्मावगमो हि यो वै
जितं जगत्केन मनोहि येन॥

विद्या विद्+क्यप+टाप् से बनता है जिसका अर्थ है भावगम्य अर्थात् निश्चयात्मक ज्ञान-सा विद्या या विमुक्तये। इसी प्रकार बोध बुध+धञ् से बना है जिसका अर्थ है, जागरूक होना, प्रत्यक्ष ज्ञान अर्थात् प्रज्ञा चिंतन। विघ्नहर्ता गणेशजी बुद्धि के पति हैं तथा ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य और धर्म, बुद्धि के अंग माने जाते हैं।

महर्षि पतंजलि ने भी मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणाम सुख-दुःख पुण्यापुण्य विष्याणां भावनातश्चित प्रसादनम्, कहकर सुखी पुरुषों से मित्रता, दुखियों पर दया पुण्यात्माओं को देखकर प्रसन्नता और पापियों के प्रति उदासीनता को चित्त शुद्धि का साधन माना है। गुरु वशिष्ठजी भी भगवान राम से कुछ ऐसा ही कहते हैं।

छूटइ मल कि मलहि धोएं,
घृत की पाव कोई बारि बिलोएं॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई,
अभिअंतर मल कबहुं न जाई॥ रा.च.मा.7/49/5-6

गोस्वामीजी यह मानते हैं कि विषयों के मोह से जीव तो जीव सुर भी अलग नहीं होते। विषयों से विराग तो भगवत कृपा से ही संभव है।

बिना सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग
मोह गएं बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग॥ रा.च.मा. 7/61

बापू के शब्दों में, 'वैराग्य अनुराग का साधक है और मोह अनुराग का बाधक है। गीता में जो योग है, मानस में वही प्रयोग है।' आध्यात्मिक व्यक्ति पूर्णतः जागा हुआ व्यक्ति माना जाता है, जिसमें गीता में वर्णित दैवी संपत्तियां, अभय, सत्व, शुद्धि, दान, यज्ञ, स्वाध्याय, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, शांति आदि का निवास होता है। रामायण में मात्र इसकी चर्चा ही नहीं, अपितु लीला कथा के माध्यम से व्यक्ति में जोड़ने का प्रयास किया है।

बहुधा यह कहा जाता है कि ज्ञान का व्यावहारिक रूप से ही भक्ति है जो साधक को नौ रसों की अनुभूति कराता है। जीव ब्रह्म का ही अंश है, परन्तु माया में बंधा अपने ज्ञान को भूल गया है।

ईश्वर अंस जीव अबिनासी,
चेतन अमल सहज सुखरासी।
सो मायाबास भयउ गोसाईं,
बंध्यो कीर मरकट की नाईं॥ रा.च.मा. 7/118

माया की ग्रंथि झूठी है पर ग्रंथि भेदन नहीं हो पाता क्योंकि सात्विक श्रद्धा के बिना जप, तप, व्रतादि का कुछ भी मूल्य नहीं होता।

समस्त रामायण आध्यात्मिक चेतना का ही संविधान है। इसके सभी पात्र, कथानक तथा वावावरण आध्यात्मिकता को ही प्रश्रय देते हैं।

-द्वारा लकी बिस्कुट कंपनी, हाजीगंज, पटना -800008

आत्मावलोकन

मंजुला जैन

नारी समय को पहचाने

समय का सम्यक् नियोजन नारी-व्यक्तित्व की परम कसौटी है। यह जीवन का सहचर है और सर्वांगीण विकास का आधार भी। समय का स्वरूप परिवर्तनशील है। नारी आज परिवर्तन की चौखट पर खड़ी संघर्षरत है। वह पुरुषों की ही तरह हर क्षेत्र में सफलता का परचम फहराना चाहती है और फहरा भी रही है। समाज का रथ पुरुष और नारी रूपी दो पहियों पर गतिशील होता है। उसके एक पहिये की भी उपेक्षा समाज के रथ की गति को अवरुद्ध कर देती है। समाज की प्रगति में जितना पुरुषों का मूल्य है उससे कहीं अधिक नारी का है। नारी को उपेक्षित दृष्टि से देखकर पुरुष प्रगति के पगथीयों पर नहीं चढ सकता क्योंकि नारी की वैचारिक उदारता, सशक्त कार्यक्षमता, परिवार निर्वहन कौशल और सामंजस्यपूर्ण चिंतन ही पुरुष के पौरुषी चेतना को जगाने के सामर्थ्य उत्पन्न करती है।

जरूरत बस इतनी है कि नारी समय को पहचाने और समय के साथ कदम से कदम मिलाकर चले। यदि हमारे भीतर कुछ कर गुजरने की अंतर्निष्ठा है तो नि:संदेह समय हमें सौभाग्य से भर देगा। अब्राहम लिंकन समय के प्रबल पक्षधर थे। उन्हें समय का अतिक्रमण सह्य नहीं था। एक बार उनका सेक्रेटरी ऑफिस में विलम्ब से पहुंचा। विलंब से आने का कारण पूछा तो उसने कहा–घड़ी की खराबी से देर हो गई। लिंकन ने कहा–या तो आप घड़ी बदल दें या फिर मुझे कहीं सेक्रेटरी ही न बदलना पड़े। समय की महनीय मूल्यवत्ता है। इतिहास के पृष्ठों में रेखांकित जय-पराजय, उत्थान-पतन का साक्षी व सूत्रधार समय ही रहा है। समय सब कुछ बदल देता है किंतु स्वयं परिवर्तित नहीं होता, निरंतर प्रवाहमान रहता है। किसी ने ठीक कहा–''रफ्ते-रफ्ते जिंदगी का सितम होता है। जिंदगी में हर रोज एक दिन कम होता है।'' नारी समाज को समय का महत्व स्वीकार कर अपने विकास का मानचित्र बनाना होगा। समय नारी को एक ही संप्रेरणा प्रदान कर रहा है-चरैवेति-चरैवेति। आगे बढ़ो, शिखरों चढ़ो। समय नियोजन कर व्यक्तित्व संवारे यही सच्चा सौंदर्य है।

नारी-व्यक्तित्व की ऊर्जस्विता का महत्वपूर्ण सूत्र सशक्त श्रमशीलता एवं संघर्षशीलता है। नारी सौभाग्यशाली है जिसने आत्म-विश्वास के साथ प्रखर श्रम किया है। श्रमनिष्ठ संघर्षशील ही रास्ते में आने वाली बाधाओं की परवाह किये बगैर शक्ति, क्षमता और योग्यता का समुचित सदुपयोग कर विकास के चरमोत्कर्ष पर पहुंचते हैं। प्रसिद्ध विचारक स्वेट मॉर्टन ने लिखा है–हम अपने हाथों में खिंची भाग्यरेखाओं पर ध्यान केन्द्रित करने की बनिस्पत किसी कठिन परिश्रम और संघर्ष के लिए अपने हाथों का नियोजन करें। परिश्रम ही मनुष्य के लिये ईश्वरीय शक्ति है। यही व्यक्तित्व को प्रभावशाली तथा परिमार्जित कर सफलता का सुकून दे सकती है। सती-सावित्री नारियों ने भीष्म यातनाओं और कष्टमय स्थितियों को झेलकर भी अपने शौर्य से अपनी अस्मिता की रक्षा की है, इसी का परिणाम है कि वह आज अपनी स्वतंत्र पहचान बना सकी, जीवन के हर क्षेत्र में पुरुषों से दो कदम आगे है। उसका दायरा इतना विस्तृत हो गया कि उसने पुरुष के हर कार्य क्षेत्र में अपना अनुशासन कर लिया है, इस दृष्टि से नारी को केवल भोक्ता मानकर उससे उपेक्षात्मक व्यवहार करना उसकी अस्मिता, अस्तित्व को अस्वीकार करना है। भगवान महावीर ने दमित होती नारी की शक्ति को दासता से मुक्त कर उसे अपने अस्तित्व का यथार्थ दर्शन कराया। सचमुच नारी ऊर्जा का अजस्र स्रोत है, शक्ति का अक्षय कोष है। चिंतन सर्जना का और संस्कारों का प्रशिक्षण केन्द्र है, जिसका आलंबन पाकर परिवार समाज, को समाज राष्ट्र को और राष्ट्र विश्व को संस्कृति के अनुरूप संस्कारों से संस्कारित कर सकता है।

समय की पकड़ और समय का सम्यक् नियोजन नारी को उसकी भूमिका में सार्थक और सक्षम बनाता रहा है और नये भविष्य को निर्मित करने के लिये भी उसे समय के रथ पर ही सवार होना होगा। समय पर अपनी ढीली पड़ती पकड़ के कारण ही वह संस्कार निर्मात्री के अपने गौरवपूर्ण दायित्व से पीछे हटी है, कहीं-न-कहीं उसकी छवि का ह्रास हुआ है। संस्कार जीवन की अमूल्य धरोहर है, संस्कारहीन जीवन निर्जीवता का जीवन है, अतीत में यह स्वर हमारे पूर्वजों से बहुत बुलंद हुआ है कि संस्कारहीन मानव लोहकार की धोंकनी की तरह निष्प्राण होता है जिसके पास श्वास, वाणी, गतिशीलता, सब कुछ प्राप्त होते हुए भी संम्यक् संस्कार नहीं है। आज जिस प्रतिस्पर्धात्मक गति से संस्कारहीनता हमारी संस्कृति पर हावी हो रही है, वह हमें स्वयं से स्वयं की समीक्षा करने हेतु प्रेरित कर रही है कि आखिर इस संस्कारहीनता, उच्छृखलता का उत्तरदायी कौन है? उत्तरदायी है माँ। संस्कार सृजन का मूलभूत कर्तव्य है माँ अथवा नारी का। आज के बिखरते हुए संस्कारों का एक प्रमुख कारण है माँ का बच्चों के प्रति उपेक्षा भाव यानी बच्चों को पर्याप्त समय न दे पाना। फैशन और प्रतिस्पर्धा के दौर में शायद आज भारतीय नारियाँ स्वयं को माँ कहने में हिचकिचाहट का अनुभव करती है। फिर हम हमारी भावी पीढी को सुसंस्कारित होने की आशा कैसे कर सकते हैं। शैशव अवस्था प्राप्त शिशुओं को संस्कारों के साँचे में ढालना माँ का प्रथम कर्तव्य है।

वर्तमान के नारी समाज को यह भलीभांति समझना होगा कि समय का सही प्रबंधन न हो तो दिनचर्या अव्यवस्थित और जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। समय मूल्यवान् है। सतत प्रवाही सरिता के समान समय चल रहा है। नारी को सार्थक मुकाम हासिल करने के लिए चाहिए कि वह समय का सही उपयोग करें । समय के फलक पर वही हस्ताक्षर कर सका जिसने इसकी महत्ता को समझा। जीवन वर्तमान है। व्यक्तित्व-निर्माण की पहली शर्त है समय का सही प्रबंधन। पश्चिमी दार्शनिक इमर्सन ने कहा–मैंने समय का सही नियोजन करके 360 वर्ष में होने वाले कार्य 60 साल में निपटा दिये।

नारी-जीवन के लिये समय का मूल्यांकन बहुत जरूरी है क्योंकि जिंदगी न तमाशबीनों का खेल है न गणित का सवाल। यह एक यात्रा है आशा को अर्थ देने वाली यात्रा, गिरावट से ऊपर उठाने की यात्रा, मजबूरी से मनोबल की यात्रा, ससीम से असीम बनने की यात्रा। बाहर से भीतर की यात्रा। इस यात्रा में सफलता का विजयस्तंभ वही स्थापित कर सका जिसने समय को पहचाना। एक क्षण का विलंब भी हजारों-लाखों का विनाशक हो सकता है। अत: समय मुट्ठी में बंद रेत की तरह फिसल रहा है। अलसता की चादर ओढ़कर बैठने वाले देखते रह जायेंगे। ■

दर्शन

आचार्य विजय नित्यानंद सूरि

अध्यात्म का मार्ग है प्रेम का

अध्यात्म का मार्ग शांति का मार्ग है, प्रेम का मार्ग है, ज्ञान का मार्ग है। हम जिस समाज में रहते हैं, उसमें शांति बनी रहे, परन्तु उससे पहली जरूरी है, हम अपनी शांति बनाये रखें। अपनी शांति खोकर दूसरों की शांति की कामना करना यह धर्म का या अध्यात्म का मार्ग नहीं है। धर्म कहता है–तुम अपना धर्म रखकर दूसरों को धार्मिक बनाओ तब तो ठीक है, यदि स्वयं अहिंसक रहकर दूसरों को अहिंसा का पाठ पढ़ाओ तब तो अच्छा है। परन्तु हाथ में तलवार लेकर यदि दुनियां को मुहब्बत का पाठ पढ़ाना चाहते हो, हाथ में बंदूक लेकर प्रेम का संदेश देना चाहते हो तो यह एक प्रकार की विडम्बना ही है। उपाध्याय श्री विनय विजयजी महाराज फरमाते हैं–

अर्हन्तोऽपि प्राज्य शक्तिस्पृशः किं, धर्मोद्योगं कारयेयुः प्रसह्य।
दद्युः शुद्धं किन्तु धर्मोपदेशं यत्कुर्वाणाः दुस्तरं निस्तरन्ति?

अरिहंत परमात्मा अनंत बली होते हैं, उनके समान शक्ति संपन्न पुरुष संसार में दूसरा कोई नहीं होता। हजारों वासुदेवों से अधिक बल चक्रवर्ती में होता और हजारों चक्रवर्तियों से अधिक बल इन्द्र में होता है और हजारों इन्द्रों से भी प्रचंड बल अरिहंत परमात्मा में होता है। अरिहंतों के पांव के अंगूठे में भी इतनी शक्ति और इतना बल होता है कि यदि थोड़ा-सा अंगूठा दबा दे तो मेरुपर्वत कांपने लग जाता है। लोग कहते हैं कि यह धरती शेषनागजी के फन पर टिकी है परन्तु यदि अरिहंत भगवान चाहे तो अपनी कनिष्टा अंगुली पर इस धरती को उठाकर चक्र की तरह घुमा सकते हैं। इतना अनंत बल होते हुए भी कभी वे अपने इस बल का उपयोग नहीं करते। कहने का अभिप्राय यह है कि इस प्रकार के अनंत बली अरिहंत देव परमात्मा महावीर चाहते तो क्या समूचे संसार को जबर्दस्ती जैनी नहीं बना देते? हजारों इन्द्र उनकी सेवा में हाथ जोड़कर खड़े रहते थे, यदि एक शक्रेन्द्र को ही आदेश देते–जाओ समूचे संसार में हिंसा को मिटा दो, सभी दुराचारियों का नाश कर डालो, सब पापियों को पकड़कर नरक में भेज दो, तो क्या इन्द्र महाराज भगवान की आज्ञा की अवहेलना करते? नहीं, परन्तु उन्होंने ऐसा कभी सोचा ही नहीं।

किसी भी धर्म में उनके भगवान या पैगम्बर केवल ज्ञान मार्ग और प्रेम मार्ग का ही उपदेश देकर मनुष्य को अधर्म से बचाने का प्रयास करते हैं। तो भगवान महावीर ने भी कभी भी अपनी शक्ति, बल या ऋद्धि-वैभव का प्रयोग करके किसी को धर्म मार्ग पर, नीति मार्ग पर लाने का प्रयास नहीं किया। उनका विश्वास था–ज्ञान द्वारा हृदय परिवर्तन की शुद्ध प्रक्रिया में ही धर्म है और उसी के बल पर संसार से पार पहुंचा जा सकता है।

भगवान महावीर का शिष्य था राजकुमार जमालि। वह सगा जंवाई भी था और फिर शिष्य भी बना। जब शिष्य बना है तब वह भगवान का परम विनीत आज्ञाकारी शिष्य है। भगवान के उपदेशों के 11 अंग आदि का अध्ययन कर विद्वान बनता है, तपस्या, ध्यान आदि करता है, परन्तु एक बार जब एक विषय पर भगवान द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से उसका मतभेद हो जाता है, तो वह अपनी तर्क, युक्ति और धारणा को महत्व देकर सर्वज्ञ वीतराग के वचनों का भी विरोध करता है, उन्हें मिथ्या बताता है। भगवान उसे तर्क और युक्ति से समझाते हैं, परन्तु जमालि नहीं मानता, वह कहता है जो मैंने समझा है, वही सत्य है, मेरा कथन ही युक्तियुक्त है भगवान के वचन मिथ्या है।

एक कहावत है–कुछ लोग कहते हैं, संसार में डेढ़ अकल है। एक अकल हमारे में और आधी बाकी संसार में। उनकी क्षुद्र सोच के चार सूत्र होते हैं– (1) जैसा मैं कहता हूं, वैसा ही सब कहें, (2) जैसा मैं सोचता हूं वैसा ही सब सोचें, (3) जैसा मैं करता हूं वैसा ही सब करें और (4) संसार में सबसे समझदार मैं हूं। बाकी संसार मूर्ख है, अज्ञानी है। ऐसे मिथ्या अभिमानी लोगों में ही जमालि का नाम लिखा जाता सकता है। उसने स्वयं को भगवान माहवीर से भी अधिक बड़ा ज्ञानी मान लिया और भगवान को मिथ्यावादी कहने का दुःस्साहस किया।

इतना झूठा अभिमान करने वाले मिथ्यावादी जमालि को अनंत बली भगवान नहीं रोक सके तो फिर संसार में कौन किसको रोक सकता है। क्योंकि जिसकी जैसी भवितव्यता होती है, होनहार होती है उसे कोई भी नहीं बदल सकता। न तो तीर्थंकर बदल सकते हैं, न ही विष्णु, ब्रह्मा और महादेव। श्रीमद् भागवत में श्रीकृष्ण कहते हैं, मैं भी वही करता हूं जो होनहार है। और यही निश्चय नय है। इसी दृष्टि का आश्रय लेती है, औदासीन्य भावना या माध्यस्थ भावना। ■

डाकू और लड़ाकू

रविशंकर महाराज गुजरात के गांधी थे। महाकवि झवेरचंद मेघाणी ने इन्हें मूक सेवक और चलता-फिरता गांधी विद्यापीठ कहा था। उन्होंने अपना पूरा जीवन जरूरतमंदों की सेवा में होम किया। अकाल पड़ा हो या बाढ़ आई हो या भूकम्प, महाराज तुरंत दौड़ पड़ते थे। स्वतंत्रता संग्राम का यह योद्धा आजीवन बापू मार्ग पर चलता रहा। उन्हें 1922 के एक रात्रि प्रवास में लोगों ने चेतावनी दी कि आगे रास्ते में डाकुओं की टोली खड़ी है। मत जाइए।

महाराज को मानो इसी की तलाश थी। गए। कुछ दूरी से ललकार उठी 'खबरदार वहीं खड़े रहो। बताओ, कौन हो?' महाराज ने जवाब दिया–'तुम्हारे जैसा ही...लड़ाकू हूं, राज के सामने लड़ने वाला।' कौन सी टोली के हो?' डाकू सरदार ने पूछा। 'महात्मा गांधी की। तुम मेरे पास तो आओ। मैं तुम्हें सच्ची लड़ाई सिखाऊंगा।'

वे लोग पास आए तो बिठाकर महाराज रविशंकर ने समझाया, सच्ची मर्दानगी तो हमारे देश को गुलाम बनाने वाले अंग्रेजों को भगाने में है। गांधी महात्मा की अगुवाई में देश की आजादी केक लिए लड़ना बड़े पुण्य का काम है। गरीब-निर्दोष प्रजा को पीटना पापकर्म है, तुम इसे छोड़ दो। डाकुओं ने पूरे आदर के साथ उन्हें सुना और गांधी बापू के दर्शन कराने का वचन लेकर विदा हुए।

–डॉ. देवव्रत जोशी

बुनियाद

डॉ. प्रीति जैन

मानवता की आधारशिला

आज औरत हर क्षेत्र में पुरुष के बराबर कदमताल कर रही है। अपितु ऐसा भी लगता है कि वर्तमान सदी तथा आगे आने वाली सदियां औरत की ही सदियां होंगी। अब यह प्रासंगिक हो गया है कि जितना जल्दी हो, पुरुष को औरत की अस्मिता को पहचानना शुरू कर देना चाहिए। अलबत्ता, यह बात इतनी आसान नहीं है। नारी को अपना प्राप्य हासिल करने के लिए अभी बहुत कुछ करना शेष है। सवाल यह है कि नारी इसके लिए क्या करे?

जब-जब नारी ने अपनी श्रेष्ठता को उजागर करने की कोशिश की है, तब-तब पुरुष ने इसे अपने वर्चस्व पर चोट समझा है। जब-जब यह बात सामने आई कि एक औरत किसी भी पुरुष से दोयम नहीं है, वह सब कुछ कर सकती है तो पुरुष की त्योरियां चढ़ी है–आज एक स्त्री शारीरिक या मानसिक रूप से भी किसी भी पुरुष से उन्नीस नहीं पड़ती। यही द्वंद्व है, जो आदमी और औरत को अलग-थलग कर रहा है।

स्त्री-पुरुष के बीच की ऐसी टकराहट आज विघटन का बायस बन रही है। सदियों से दमित, पीड़ित नारी ने आज अपने हकों के लिए एक जबरदस्त जंग छेड़ रखी है। लगता यह है कि दोनों ओर से अहं टकरा रहे हैं। आदमी अपने द्वारा प्रसूत प्रभुत्व को छोड़ना नहीं चाहता। जबकि उसके प्रभुत्व का कोई समुचित आधार नहीं है। अनेक नारी-आंदोलन इस बात के सबूत हैं कि अब नारी के कदम रुकने वाले नहीं है। महिला सशक्तीकरण को नारी पहचानने लगी है। वह राष्ट्र की मुख्यधारा में अपना वजूद भी तलाशने लगी है। आज राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री से लेकर गांव की सरपंच, उपसरपंच के रूप में सब ओर महिलाएं आसीन हो रही हैं। फिर भी यह सब काफी नहीं है। नारी शक्ति को अपनी जमीन तैयार करनी होगी। उसे शिक्षा के बल पर ज्ञान का प्रकाश और वैज्ञानिक दृष्टिकोण लाना होगा।

यह सही है कि नारी ने जीवन के हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा ली है, पर ऐसी नारियां अभी भी मुट्ठी भर ही हैं। बहुसंख्यक नारियां अभी बदहाल हैं। गांव में ही क्यों, शहरों में भी बड़ी संख्या में ऐसी स्त्रियां हैं–जिन्हें देखकर लगता है कि नारी-आंदोलन का प्रभाव वहां तक पहुंच नहीं पाया है। लेकिन, इतना संतोष है कि नारी चेतना की सुगबुगाहट वहां भी सुनाई पड़ने लगी है। यहां पर यह समझना आवश्यक है कि नारी-आंदोलन अपने शील और अपनी अस्मिता को सुरक्षित रखने की पहल करे। अपनी खूबसूरती और यौवन को नुमाइश की तरह पेश नहीं करे। वह न किसी का शोषण करे, न होने दे।

सामाजिक विकास, मानवाधिकार, जनसंख्या नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण आदि मुद्दों पर गहराई से विचार करें तो पाते हैं कि महिला सशक्तीकरण से ही ये मुद्दे हासिल हो सकते हैं। सामाजिक समस्याएं, प्रजनन, स्वास्थ्य, मातृत्व के दायित्व, स्त्री-शिक्षा, स्त्री-पुरुष समानता व सामाजिक न्याय आदि महिला सशक्तीकरण के बुनियादी आधार हैं।

महिला सशक्तीकरण के लिए ऐसी सामाजिक बुराइयों को दूर करना भी आवश्यक है, जो समाज के लिए कलंक की मानिंद है। जैसे-दहेज लेने वालों का सामाजिक बहिष्कार किया जाना चाहिए। आज भी बहुत-सी महिलाएं घूंघट में रहती हैं, जिससे उनकी कार्यक्षमता में कमी आती है–इसे समाप्त करना होगा। विधवा व पुनर्विवाह करने एवं बहु-विवाह को रोकने के लिए समाज में विभिन्न प्रकार के अभियान चलने चाहिए। बाल विवाह को केवल कानून बनाकर ही खत्म नहीं किया जा सकता, इसे शिक्षा व समुदायों की सोच में परिवर्तन लाकर रोका जा सकता है। इसी तरह माता-पिता द्वारा दहेज न देने या कम देने पर लड़की को ससुराल में तंग व प्रताड़ित करने, कई प्रकार के अत्याचार और कई बार आत्महत्या करने जैसे हालात पैदा करने की घटनाओं पर नियंत्रण जरूरी है। यह कैसे हो? इस पर विचार होना चाहिए।

आदमी और औरत को क्या किसी ने अलग किया है? यदि प्रकृति उन्हें अलग करती, तो उन्हें साथ-साथ भेजती ही क्यों? यदि स्त्री-पुरुष अलग-अलग ही होते तो सृष्टिचक्र कैसे चलता? दोनों जब तन-मन से एकाकार हुए तभी तो निखिल सृष्टि का व्यापार चला, सभ्यता ने आंखें खोलीं और संस्कृति ने पंख पसारे। तभी समाज में समरसता पनपी और स्वस्थ समीकरण बने।

प्रकृति ने इनको यह कह कर भेजा है कि उनकी भूमिकाएं एक-दूसरे की पूरक हैं, दोनों में कोई स्पर्धा नहीं। दोनों का तादात्म्य ही मानवता की आधारशिला है। कोई किसी का प्रभु नहीं, कोई किसी का दास नहीं। एक-दूसरे की पूरकता ही दोनों का धर्म है। प्रकृति ने यह भी कहा कि जिस दिन पारस्परिकता के इस धर्म का निर्वाह स्त्री-पुरुष करना बंद कर देंगे–उसी दिन से परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व का ढांचा चरमरा जाएगा।

आदमी और औरत को क्या किसी ने अलग किया है? यदि प्रकृति उन्हें अलग करती, तो उन्हें साथ–साथ भेजती ही क्यों?

सुप्रिया

लाभदायक है खुलकर हंसना

कहावत है 'लाफ्टर इज दी बेस्ट मेडिसन' यानी हंसना सबसे उत्तम दवा है। खुलकर हंसना सेहत के लिए रामबाण है। जो लोग खुश रहते हैं वे बीमारियों की चपेट में कम आते हैं और बीमार पड़ जाने की स्थिति में ठीक भी जल्दी हो जाते हैं क्योंकि उनकी शरीर की रोग प्रतिरक्षा प्रणाली सही तरह से काम करती हैं। पर क्या इन बातों का कोई वैज्ञानिक आधार भी है।

नार्मन कजिंस नाम का शख्स 49 वर्ष की उम्र में बीमार पड़ा। उसे अस्पताल में दाखिल कराया गया। रीढ़ की हड्डी की 'एंकाईलूजिंग स्पांडीलाइटिस' नाम की कोई गंभीर बीमारी से वह पीड़ित था। बीमारी बड़ा खतरनाक रूप धारण कर चुकी थी और तिल-तिल कर नार्मन मृत्यु की तरफ अग्रसर होता जा रहा था। पर ऐसे में चमत्कार हो गया। डॉक्टरों को आश्चर्य करता छोड़ नार्मन पूर्ण रूप से स्वस्थ हो उठा। इस चमत्कारिक स्वास्थ्य लाभ की घटना से सभी चकित थे। नार्मन ने जब इसका रहस्योद्घाटन किया तो सभी दांतों तले अंगुली दबाने लगे। नार्मन का कहना था कि उसके अस्पताल में रहने के दौरान चुटकलों और हल्के-फुल्के मजाक और प्रसंगों से भरी पुस्तकों को पढ़ने से ही चमत्कारी रूप से उसे बीमारी से मुक्ति मिल पायी थी।

अपने अनुभवों पर आधारित नार्मन ने एक पुस्तक भी लिखी, जिसमें उसने मरीज और डॉक्टर के पारस्परिक संबंध, भावनाओं और आवेगों की केमेस्ट्री पर विस्तार से प्रकाश डाला। इस पुस्तक को इतनी सफलता मिली कि लाखों और करोड़ों की तादाद में इसकी प्रतियां बिकी।

नार्मन कंजिस से पहले, कोई चार दशक पूर्व नार्मन विसेंट पिएले नामक पादरी ने अपनी पुस्तक 'दी पावर ऑफ पॉजिटिव थिकिंग' में अच्छे या सकारात्मक विचारों की शक्ति को पहचाना था। मगर कई दशक भर पहले ही वैज्ञानिकों का ध्यान इस तरफ गया और आवेग-संवेग आदि भावनाओं का मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे में उन्होंने शोध-अध्ययन किए। इस तरह से विज्ञान की नई शाखा का जन्म

हुआ जिसे मनोतंत्रिका प्रतिरक्षा विज्ञान या साइकोन्यूरोइम्युनोलॉजी (पीएनआई) का नाम दिया गया।

मनोविज्ञान का मरीज के स्वास्थ्य पर बड़ा असर पड़ता है। अगर मरीज के अंदर मनोबल हो तो मनोवैज्ञानिक रूप से वह अपने आपको स्वस्थ महसूस करने लगता है। इसके विपरीत अगर मनोबल की ही मरीज के अंदर कमी हो तो मनोवैज्ञानिक रूप से घोर निराशा का अनुभव वह अपने अंदर करता है। यानी आशा और निराशा का मरीज के स्वास्थ्य पर बड़ा असर पड़ता है। अमरीकी कैंसर विशेषज्ञा कार्ल साइमनटन के अनुसार मुसीबत में जो जल्दी धीरज खो देते हैं या निराशा का शिकार हो जाते हैं ऐसे व्यक्तियों पर कैंसर का कहर जल्दी टूटने का खतरा रहता है। कैंसर पीड़ित मरीज भी अगर ठीक होना चाहते हैं तो निराशा को तो अपने पास फटकने नहीं देना चाहिए। इस तरह मानसिक तौर पर अपने अंदर आशा जागृत करने का असर यह होता है कि प्रतिरक्षा कोशिकाएं नए सिरे से क्रियाशील हो उठती हैं।

मनोतंत्रिका प्रतिरक्षा वैज्ञानिकों ने तंत्रिका और प्रतिरक्षा प्रणालियों के बीच कार्यरत एक नए 'फीडबैक लूप' (पुनर्भरण पाश) के बारे में पता लगाया है। उनकी शोधों से इस बात पर भी प्रकाश पड़ा है कि हार्मोन, तंत्रिका प्रेक्षी (न्यूरोट्रांसमीटर) आदि बनाने में केवल मस्तिष्क का ही एकाधिकार नहीं जैसा कि पहले वैज्ञानिकों की धारणा थी। कुछ खास परिस्थितियों में प्रतिरक्षा कोशिकाएं भी हार्मोन, तंत्रिकाप्रेषी आदि बनाने में सक्षम होती है।

कुछ शोधकर्ताओं का ऐसा भी मानना है कि प्रतिरक्षा दमनकारी कार्टिसोल और एपीनेफ्रीन के निस्मरण में उन्मुक्त हंसी रोक लगाने में सक्षम है। यही वजह है कि खुलकर हंसने से प्रतिरक्षा कोशिकाओं को बल मिलता है। उन्मुक्त हंसी से दिल की भी कसरत हो जाती है। तभी नार्मन कजिंस ने उन्मुक्त हंसी को 'इंटरनल जागिंग' की संज्ञा दी है।

एपीनेफ्रीन नामक न्यूरोट्रांसमीटर व्यक्ति की भूख को भी नियंत्रित करता है। इसकी मात्रा अधिक हो जाने पर कम भूख महसूस होती है। तभी उन्मुक्त हंसी का खुलकर भूख लगने से संबंध हो सकता है। ऐसी धारणा कथित शोधों से पैदा हो चली है।

विदेशों में तो अस्पतालों के वार्डों में ऑपरेशन के लिए भर्ती कराये गए मरीज, खासकर बाल मरीजों की डर और दुश्चिंता को दूर करने के लिए जोकरों जैसे हास्यकर मुखौटे पहने हुए लोगों का सहारा लिया जाता है। अजीबोगरीब चेहरों और हरकतों को देखकर बच्चे हंसी से फट पड़ते हैं। इससे उनके मन में ऑपरेशन के प्रति जो भय और चिंता मिली उत्सुकता होती है, वह काफी हद तक कम हो जाती है। कैलिफोर्निया स्टेट यूनिवर्सिटी के नर्सिंग विभाग के अध्यक्ष वेरा राबिंसन के अनुसार पिछले करीब दो दशकों से हंसी का सहारा लेकर उन्होंने ऑपरेशन के लिए प्रतीरक्षारत मरीजों को मनोवैज्ञानिक ढंग से राहत पहुंचाई हैं। उनका कहना है कि ऑपरेशन के प्रति मरीज की दुश्चिंता और डर कम होने का असर यह पड़ता है कि ऑपरेशन के बाद वह जल्दी स्वास्थ्य लाभ करता है। मानसिक दबावों या समस्याओं के चलते व्यक्ति निराशा के चंगुल में फंस सकता है। पर ऐसे में एक स्वस्थ वातावरण की तरफ मन को मोड़ना सेहत के लिए हितकारी है। उन्मुक्त हंसी का इसमें बड़ा योगदान हो सकता है।

–विभावरी, जी-9, सूर्यपुरम, नंदनपुरा, झांसी-284003 (म.प्र.)

खानपान

पुष्पेन्द्र मुनि

अमेरिका में शाकाहार भोजन, मांसाहार भोजन की तुलना में महंगा है और इसे युवा पीढ़ी सिर्फ इसलिए अपना रही है क्योंकि वह स्वयं को उच्चवर्ग का हिस्सा बना सके।

सर्वोत्तम आहार शाकाहार

शाकाहार वास्तव में एक वैज्ञानिक धारणा है। उसके कई अर्थ है जिनमें पहला तो यह है कि जीव की हिंसा नहीं की जानी चाहिए और दूसरा यह है कि भोजन में केवल वे वस्तुएं शामिल हो जो शरीर को सात्विक रखें अर्थात हमारे मन में हमारे शरीर के द्वारा हिंसा का भाव उदय न हो। शाकाहार करने वाला सद्गुणी, चरित्रवान और नैतिकता से पूर्ण इनसान कहलाने के योग्य होता है। मनुष्य के लिए शाकाहार है और शाकाहार के लिए मनुष्य है।

भारतीय संस्कृति आर्य संस्कृति की आधारशिला है। आर्य संस्कृति का आहार भोजन शुद्ध शाकाहार ही रहा तभी हजारों वर्षों बाद भी जनमानस श्रमण संस्कृति के संस्थापक ऋषभदेव, चौबीस तीर्थंकर, गणधर, चक्रवर्ती, राम, श्रीकृष्ण, बुद्ध, जीसस इत्यादि महापुरुषों ने इस भोजन से जीवन निर्माण कर स्व पर का कल्याण किया। भगवान महावीर ने शाकाहार को परिभाषित करते हुए आचारांग सूत्र के 1.1.3 में कहा कि 'सव्वेयिजीवयं पियं नाइवाएज्ज कंचणं' अर्थात सभी को जीवन प्यारा है कोई मृत्यु को प्राप्त होना नहीं चाहता।

शाकाहार प्रेम का संदेश देता है। स्वस्थ शरीर रखने के लिए मनुष्य को शाकाहार करना चाहिए, इसी से मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है और यह जीने की कला सिखाता है। मांसाहार पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण है। मांसाहारी व्यक्ति के मन में दया का भाव नहीं होता है। इसलिए कहा गया है कि 'मांसाशिनि कृतो दया'। मानव इतना स्वार्थी हो गया है कि क्षणिक अपने ही जिह्वा स्वाद के लालचवश होकर वह निर्दोष प्राणियों का वध करने एवं पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ने से भी नहीं चूक रहा है।

शाकाहार का समर्थन करते हुए पैगम्बर मोहम्मद साहब ने कहा है कि दुनिया के प्रत्येक प्राणी पर रहम करो क्योंकि खुदा ने तुम पर बड़ी मेहरबानी की है।

21वीं सदी में हमारा देश, हमारी संस्कृति शाकाहार की गुणवत्ता को त्याग कर उनके स्थान पर मांसाहार को स्थापित करने के प्रयास में है। लेकिन हमारा यह कदम हमारी सुख-शांति और समृद्धि के लिए आत्मघाती है। शाकाहारी के अंतर्गत साग, हरी सब्जियां एवं फल मात्र ही नहीं आते अपितु गेहूं, जौ, चना, मक्का, समस्त प्रकार की दालें, मसालें भी आते हैं। शाकाहार अहिंसक प्रणाली पर आधारित एक परिपूर्ण भोजन व्यवस्था का नाम है। मध्यप्रदेश के पूर्व राज्यपाल श्री चांडी का वक्तव्य याद आता है कि जब उन्होंने कहा था कि विश्व के शांति हेतु तीर्थंकरों के दो सिद्धांत ही पर्याप्त है- अहिंसा और शाकाहार।

स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क बफैली के अनुसार अमेरिका में प्रतिवर्ष 47000 से अधिक बच्चे माता-पिता के मांसाहारी होने के कारण जन्म से ही बीमारी से पीड़ित होते हैं। मांसाहार के जरिये मनुष्य के शरीर में 160 अन्य बीमारियां प्रवेश करती है, इनमें से कुछ जानलेवा और कुछ मंद प्राणघातक है।

ब्राउन यूनिवर्सिटी के वर्ल्ड हंगर प्रोग्राम के अंतर्गत अनुमान लगाया गया है कि मांस उत्पादन के लिए जितना अनाज दुनिया में पशुओं को खिलाकर उन्हें तैयार किया जा रहा है उससे केवल 2.6 अरब शाकाहारियों की भूख मिटाई जा सकती है।

1847 में पहली वेजिटेरियन सोसायटी की स्थापना ब्रिटेन में हुई। रेवरैंड विलियम काउहर्ड नामक व्यक्ति अमेरिका में शाकाहार का संस्थापक माना जाता है। रेवरैंड व अन्य कई जागरूक लोगों ने मिलकर 1950 में न्यूयार्क में वेजिटेरियन सोसायटी की स्थापना की। अमेरिका में शाकाहार के फैलाव के लिए अमेरिकी लेखिका एलन जी व्हाइट का योगदान भी महत्वपूर्ण है। 1889 में इग्लैंड में 52 शाकाहारी रेस्टोरेंट थे जिनमें से 34 लंदन में थे। ब्रिटेन के प्रसिद्ध उपन्यासकार एवं समाजवादी चिंतक जॉर्ज बर्नाड शॉ पूर्ण शाकाहारी थे।

सुकरात, प्लेटो, अरस्तू भी शाकाहार के समर्थक थे। वर्तमान में भी अमेरिका में शाकाहार भोजन, मांसाहार भोजन की तुलना में महंगा है और इसे युवा पीढ़ी सिर्फ इसलिए अपना रही है क्योंकि वह स्वयं को उच्चवर्ग का हिस्सा बना सके।

नीदरलैंड (हॉलैंड) में एनिमल राइट्स के लिए नई राजनीतिक पार्टी बनाई गई। 2006 के चुनाव में आश्चर्यजनक रूप से दो सीटे जीती। इससे लोगों का रूझान, समझ और संवेदनशीलता का पता चलता है। अमेरिका के जॉन रोबिंस की पुस्तक 'डाइट फॉर अमेरिका' में उल्लेख है कि शाकाहार अपनाने वालों का स्वास्थ्य ज्यादा अच्छा पाया।

इस युग में अहिंसा प्रणेता महात्मा गांधी शाकाहार के कट्टर समर्थक हुए हैं। जीवनभर गांधी और विनोबा भावे संपूर्ण देश में शाकाहार का प्रचार करते रहे। गांधी के संपर्क में जो लोग आए उनमें सरोजनी नायडू और राजकुमारी अमृतकौर सरीखे लोगें ने शाकाहार ग्रहण किया। सुनते हैं कि मदर टेरसा भी शाकाहारी थी। स्वामी शिवानंद के शिष्य व अंतर्राष्ट्रीय योग वेदांत केन्द्र के संस्थापक स्वामी विष्णुदेवानंद शाकाहार के प्रबल समर्थक थे। बिश्नोई समाज में मांस के सेवन पर पूर्णतया पाबंदी है। मान्यता है कि समाज के धर्मगुरु जंभेश्वर को जीवों से बेपनाह मुहब्बत थी, इसी वजह से समाज का कोई भी व्यक्ति मांस को स्वीकार नहीं करता। दैनिक भास्कर में 15 नवम्बर 2007 को प्रकाशित समाचार के अनुसार नागौर में सूफी हमीदुद्दीन नागौरी की दरगाह पर कोई भी मांस खाकर नहीं जाता है।

उल्लेखनीय है कि दलाईलामा पूरी तरह शाकाहारी है। शाकाहार अपनाने के बारे में दलाईलामा का अनुभव काफी रोचक रहा है। तिब्बती समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग शाकाहार भोजन को स्वीकार कर रहा है। लगभग सभी बौद्ध मठों की रसोइयों में केवल शाकाहारी भोजन ही पकाया जाता है। ओशो वर्ल्ड जनवरी 2011 अंक में ओशो ने लिखा है कि हिटलर न तो शराब पीता था, न सिगरेट। वह पूर्ण शाकाहारी था।

-महावीर भवन, 114, जनता नगर, न्यू सिविल रोड, निकट कापड़िया हैल्थ क्लब, सूरत-395007

आदमी शांति की प्राप्ति के लिए इधर-उधर भटकता रहता है, किंतु वह तो उसके भीतर है। तेल तिलों में होता है, धूलिकणों में नहीं।

उद्बोधन

आचार्य महाश्रमण

सफल जीवन के सूत्र शांति और शक्ति

आध्यात्मिक व्यक्ति अथवा साधनाशील व्यक्ति आत्मा से परमात्मा बनना चाहता है। परमात्मा है या नहीं, यह बात आदमी के सामने प्रत्यक्ष नहीं है। इस बात को शास्त्रों के आधार पर समझा जा सकता है, स्वीकार किया जा सकता है। किंतु वर्तमान जीवन सबके सामने प्रत्यक्ष है। इसीलिए व्यक्ति को यह चिंतन करना चाहिए कि मेरा वर्तमान जीवन अच्छा कैसे बनें? हालांकि आदमी का अधिकांश समय अतीत की उधेड़बुन में या भविष्य की कल्पना में बीत जाता है। वह या तो स्मृति में उलझा रहता है या फिर कल्पना के मधुर सपने देखता है। वर्तमान उसके हाथ से छूट जाता है। वह उसे पकड़ ही नहीं पाता। किंतु वास्तविकता यह है कि जो कुछ घटित होता है वह वर्तमान में होता है। इसलिए आदमी अपने वर्तमान के प्रति जागरूक रहे। वर्तमान जीवन को अच्छा बनाने के लिए तीन सूत्र महत्वपूर्ण हैं:

स्वास्थ्य संपन्नता

हर व्यक्ति को स्वस्थता काम्य होती है। अस्वस्थ या बीमार होना कोई नहीं चाहता। स्वस्थ जीवन के लिए जरूरी है कि व्यक्ति खाद्य-संयम का अभ्यास करे। यदि बिल्कुल खाना छोड़ दिया जाए तो जीना मुश्किल हो जाता है और खाता ही चला जाए तो जीना और ज्यादा मुश्किल हो जाता है। खाना और न खाना बड़ी बात नहीं होती। बड़ी बात है कि खाने और न खाने में विवेक रखना। कब, क्या और कितना खाना, यह जानकारी होनी चाहिए। जिसकी पाचन-क्रिया कमजोर हो, उसे तो अधिक सावधानी रखनी चाहिए। यदि वह ज्यादा खाता है, वरिष्ठ भोजन करता है अथवा बार-बार खाता है तो फिर स्वस्थता की आशा सोचकर ही करनी चाहिए। साधक के लिए तो और अधिक ध्यान देने की अपेक्षा है कि वह कब, क्या और कितना खाए?

भोजन से स्वास्थ्य और साधना दोनों प्रभावित हो सकते हैं। हमने आचार्यश्री महाप्रज्ञ को देखा हैं। अवस्था से वे नौंवे दशक में चले रहे थे।किंतु इस अवस्था में भी उनका स्वास्थ्य प्राय: ठीक रहा। यह हम सबका सौभाग्य था। खाद्य संयम के कारण वे अपने स्वास्थ्य की सुरक्षा किए हुए थे। मैंने अनेक बार उनसे सुना है '-तली हुई चीजों का तो मुझे स्वाद भी मालूम नहीं है।' उनका अभिमत है कि जो व्यक्ति बौद्धिक श्रम करते हैं, उन्हें खाने का संयम अवश्य करना चाहिए। खाद्य-संयम से अनेक छोटी-मोटी बीमारियां स्वत: दूर हो जाती हैं और आदमी स्वस्थ रह सकता है।

शक्ति संपन्नता

आदमी कमजोर रहना नहीं चाहता। वह शक्तिशाली बनना चाहता है। वास्तव में तो आदमी के भीतर अनन्त शक्तियों का भंडार भरा पड़ा है। अपेक्षा है उन अनन्त शक्तियों का प्रकटीकरण हो। आदमी के पास सब कुछ है-ज्ञानशक्ति, चिंतनशक्ति, कर्मशक्ति आदि। वह विकास की अनन्त संभावनाओं को उजागर कर सकता है यदि अपनी शक्तियों को जागरूकता के साथ सही दिशा में नियोजित करें। शक्तिसंपन्न व्यक्ति वर्तमान में जीना चाहता है क्योंकि उसे अपनी क्षमताओं पर विश्वास होता है। वह शक्ति, श्रम, समय और सोच के साथ कार्य संपादित करता है जिससे अपने जीवन को सार्थक कर सकता है। सत्वहीन व्यक्ति की कमजोरियों का नाजायज फायदा उठाकर लोग अपने स्वार्थों की रोटी सेकने लगते हैं इसलिए शक्तिसंपन्न होना बहुत जरूरी है। आदमी शरीर से सबल बने ताकि रोग, तनाव आदि उसे प्रभावित न कर सके किंतु शरीरबल से भी ज्यादा जरूरी है मनोबल, संकल्पबल, संयमबल आदि। यदि आदमी का मनोबल मजबूत है, दृढ़ संकल्पशक्ति है और संयम के प्रति गहरी निष्ठा है तो ऐसा कोई कार्य नहीं, जिसे वह न कर सके। व्यक्ति नई शक्तियों को जगाने का हर संभव प्रयास करे और प्राप्त शक्तियों का गोपन न हो, ऐसा संकल्प करे तो वह अपने वर्तमान जीवन को अच्छा बना सकता है।

शांति-संपन्नता

जहां क्रोध है, लोभ है, झगड़ा है, असहिष्णुता है वहां व्यक्ति की शांति नष्ट हो जाती है। जहां परिवार में कलह होता है व्यक्ति-व्यक्ति में असहिष्णुता होती है, वहां अशांति का वातावरण बन जाता है। सहिष्णु व्यक्ति ही शांत वातावरण का निर्माण कर सकता है। प्रत्येक आदमी शांति से जीना चाहता है। अनेक लोग आते हैं कि महाराज! हमें केवल शांति चाहिए। आप कोई ऐसा मंत्र बता दें जिससे हमें शांति मिल जाए। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी के पास अमेरिकन लोग आए। उन्होंने कहा-आचार्यजी! जीवन में शांति कैसे मिल सकती है? आचार्यश्री ने कहा-अमेरिका धनवान राष्ट्र है। आपको सब तरह के साधन उपलब्ध हैं। फिर भी क्या शांति नहीं मिली? अमेरिकन-नहीं। आचार्य तुलसी-शांति की प्राप्ति भौतिक पदार्थों से नहीं, त्याग और संयम के विकास से होती है। अमेरिकन-आप ठीक कहते हैं। लालसा की उच्छृंखल धारा में बहने वाला कभी शांति का दर्शन नहीं कर सकता। वह हर समय अशांति की आग में झुलसता रहता है।

आदमी शांति की प्राप्ति के लिए इधर-उधर भटकता रहता है, किंतु वह तो उसके भीतर है। तेल तिलों में होता है, धूलिकणों में नहीं। मक्खन दूध में होता है, पानी में नहीं। वैसे ही शांति आत्मस्थ होती है, परस्थ नहीं। शांति कोई दूसरा नहीं दे सकता। इन भौतिक पदार्थों में जो सुख और शांति का अनुभव होता है, वह क्षणिक है। संयोगजन्य है। संयोगजन्य सुख या शांति का वियोग अवश्यम्भावी है। भगवान महावीर ने कहा 'जत्थ जत्थ संयोगा तथ्य तथ्य वियोगा।' इसलिए आदमी अपने भीतर की ओर झांकने का प्रयास करे। वस्तुत: तभी उसे शांति उपलब्ध हो सकती है। इस प्रकार स्वास्थ्य-संपन्नता, शक्ति-संपन्नता और शांति-संपन्नता हो तो व्यक्ति अपने वर्तमान जीवन को सुफल बना सकता है।

प्रस्तुति: साध्वी सुमतिप्रभा

समन्वय

विपिन जैन

एक चीनी कहावत के अनुसार प्रेम, कार्य और आशा खुशी पाने के तीन अंग हैं। मानवीय प्रेम, मनोवांछित कार्य और अच्छे भविष्य की आशा—ये तत्व मनुष्य की खुशियों के आधार हैं।

सबके बीच से निकलता है खुशी का रास्ता

हमारी खुशी किन-किन बातों में छिपी है? या वो कौन सी चीजे हैं? जिनके पास होने पर हमारा मन खुशी महसूस करता है। हमें कभी खुद से ऐसे प्रश्न करने चाहिए और उन प्रश्नों के उत्तर पाकर पूर्ति की दिशा में कदम रखने चाहिए। खुशी एक आंतरिक भाव है। हर व्यक्ति के लिए खुशी का अवलम्ब अलग होता है। किसकी खुशी का खजाना कहां छिपा है? यह व्यक्ति खुद ही जान सकता है।

कोई व्यक्ति इच्छित गरिष्ठ भोजन पाकर तृप्ति भरी खुशी का अनुभव करता है तो दूसरा कम व सादा खाना खाकर स्फूर्ति भरी खुशी पाता है। अपने शौक और इच्छाओं को पूर्ण करके खुश होना सहज मानवीय प्रवृत्ति है। कंजूसी बरतकर या अधिकाधिक धन संग्रह की प्रवृत्ति भी किसी के लिए सुख या खुशी महसूस करने की वजह हो सकती है। अपना बढ़ता बैंक बैलेंस, रुपयों से भरती तिजोरी, प्रतिवर्ष पी.एफ. में जमा होती रकम भी खुशी के अहसास के पास हो सकती है। मैंने एक व्यक्ति को नजदीक से जाना, देखा है जिसने अपनी नौकरी में फंड से कभी कोई रकम नहीं निकाली, कोई बड़ी जिम्मेदारी सामने नहीं आयी। खुद की इच्छाओं को जाना ही नहीं, वह ज्यादा से ज्यादा पैसा वेतन से कटवाकर फंड में जमा कराता रहा। उत्तरोत्तर राशि बढ़ती गयी और रिटायरमेंट के दिन जब तीस लाख का चैक उसे मिला तो उसकी आंखें खुशी से चमकी हुई थी और चैक पर लिखे शब्दों को बार-बार पढ़ रहा था।

खुशी का आधार आपकी प्रकृति, प्रवृत्ति, उम्र, वातावरण और परिस्थितियां तो होती हैं, पर कुछ ऐसे सामान्य रूप से खुशी के पैमाने हैं जो सभी के लिए सामान होते हैं। लायक बने बच्चे, मां-बाप का सान्निध्य, पारिवारिक मेल-मिलाप, आपको समझने वाला जीवनसाथी, अच्छा स्वास्थ्य, अनुकूल परिस्थितियां और मनोकूल रोजगार आदि। अंतरंग साथ, प्रियजन का मिलना, दोस्तों की गप-शप की महफिल, यारों की पार्टी—ये भी कुछ आंतरिक और बाह्य खुशी पाने के माध्यम बन जाते हैं। कभी एक झलक प्रेमी, प्रेमिका की पा लेना सारे जमाने की खुशियों से ऊपर थी तो अब भी मोबाइल से अंतरंग बातचीत की खुशी बिल या किसी भी नजर से बेपरवाह होती है।

खुशी एक व्यक्तिगत पूंजी है जो कम या अधिक सभी के पास रहती है। इसका खाता खोलने के लिए धन की आवश्यकता नहीं होती है। यह खाता जीरो बैलेंस पर खुलता है। बस कुछ भावनात्मक पूंजी चाहिए। खुशी सिर्फ शानदार गाड़ी, अकूत दौलत, उन्नति, कामयाबी और इच्छापूर्ति से ही नहीं मिलती। उदार दृष्टिकोण, सहज विश्वास, अच्छाई पर भरोसा रखने के अतिरिक्त ममता, प्यार, स्नेह और मधुर व्यवहार से भी मिलती है। अगर सड़क पर रोडरेज की जगह सद्भावना, सहयोग, गलती का अहसास भरा व्यवहार मिले तो सफर थकान भरा कम लगेगा। खुशी दूसरों की दुख, दर्द, परेशानियों और मुश्किलों में सहायता करके भी मिलती है। आज भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जिनके लिए दूसरों की खुशी अपनी खुशी से बढ़कर होती है। जिनका धर्म ही परहित है।

जीवन में स्थायी रूप से न दुख रहता है, न खुशियां या सुख ही। कुछ खुशियां थोड़े समय के लिए टिक जाती हैं। मुश्किलों, मुसीबतों और भाग्य की विडम्बनाओं से कौन बच पाया है? खुशियां घर में, मन में टिकी रहे उसके लिए मन को धैर्यवान, शांत भाव, संतुष्ट, संतुलित होना होगा तथा रचनात्मक नजरिया अपनाना होगा।

खुशी सिर्फ दौलत वालों की गली से होकर ही नहीं गुजरती, ये गरीबों के घरों के पास भी जाती हैं। अपने जीवन की मुश्किलों, कठिनाइयों, तंगहाली के बीच वो भी कभी-कभी खुशियों की फुहारें पड़ती महसूस करते हैं उनकी खुशियों के रूप और रंग अलग हैं, अवसर अलग हैं। यूं तो धनाढ्य लोग अक्सर खुशी खोजन रोग से पीड़ित रहते हैं।

एक चीनी कहावत के अनुसार प्रेम, कार्य और आशा खुशी पाने के तीन अंग हैं। मानवीय प्रेम, मनोवांछित कार्य और अच्छे भविष्य की आशा—ये तत्व मनुष्य की खुशियों के आधार हैं। हमारी खुशियों का रास्ता दूसरों की खुशियों के बीच से ही होकर गुजरता है। दूसरों की खुशी हमारी खुशी बनें, कष्ट या जलन नहीं, हमारे प्रयास किसी के चेहरे पर हंसी या खुशी का भाव ला सकें इससे अच्छी बात क्या हो सकती है? खुशियों को पाने के बारे में लोकप्रिय व बेस्ट सेलर पुस्तकें छपी हैं। सूत्र भी खोजे गये हैं। खुश रहें, सकारात्मक सोचें, आशावादी और बहिर्मुखी बनें। अपने से परे भी सोचें, अच्छा करें अच्छा करने से, अच्छा महसूस होता है। व्यायाम प्रतिदिन करें, अवसाद दूर रखें। अपनी आध्यात्मिकता को निखारते रहें तथा आस्थावान बनें। धैर्य धारण करना सीखें। खुशी के कारणों को पहचाने तथा उसमें दूसरों को सम्मिलित करें।

—के.आई.-147, कविनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

समाधान

मुनि यशवंतकुमार

मंत्र साधना कैसे करें?

मंत्र साधना प्रारंभ करने के साथ एक अहम प्रश्न सामने रहता है कि मंत्र-साधना सफल होगी या नहीं? साधना की सफलता-असफलता में अनेक पहलू काम करते हैं। वे पहलू कौन-कौन से हैं? जैसे-मंत्र साधना का प्रारंभ किस दिन? किस समय? किस मुहूर्त्त में किया गया है? मंत्र-साधना प्रारंभ करने में शुभ दिन, शुभ मुहूर्त्त आदि का विशेष प्रभाव पड़ता है। अत: इन सब बातों को ध्यान अवश्य रख लेना चाहिए। इन सब बातों का निश्चय कर लेने के बाद साधना प्रारंभ करने की पूर्व रात्रि में 'स्वप्न मंत्र' द्वारा यह जान लेना चाहिए कि मंत्र की संपन्नता निर्विघ्न रूप से संपन्न होगी या नहीं। मंत्र मुहूर्त्त एवं स्वप्न मंत्र आदि की सामान्य जानकारी निम्न प्रकार है-

विशिष्ट दिन

मंत्र साधना के लिए कुछ विशिष्ट दिन है जिसमें साधना प्रारंभ का विशेष महत्व है। वे दिन हैं- दीपावली, होली, नवरात्रि, सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण, रवि पुष्य, गुरु पुष्य व संक्रान्ति दिवस (वर्ष में बारह संक्रान्तियां होती हैं)। इसके अतिरिक्त मंत्र साधना के लिए मंत्र विशेष में कोई विशेष दिन निर्धारित किया गया हो।

मंत्र साधना में मुहूर्त्त

मंत्र साधना में विशेष दिनों के अतिरिक्त शुभ मुहूर्त्त भी विशेष फलदायी होता है। तिथि, नक्षत्र, वार आदि के आधार पर कई विशेष योगों का निर्माण होता है, जैसे सिद्धि योग, आनंद योग, अमृत सिद्धि योग, रवियोग इत्यादि। इन विशेष योगों में शुभ लग्न, शुभ वार, शुभ तिथि, नक्षत्र, चौघड़िये, चंद्रबल आदि की शुभता भी मंत्र-सिद्धि में सहायक होती हैं। मंत्र-साधना में उपयोगी विशेष तिथि, वार आदि निम्न प्रकार हैं:-

शुभ तिथि

द्वितीय, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी (दोनों पक्षों की) पूर्णिमा।
शुभ वार: रविवार, सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार।
शुभ नक्षत्र: अश्विनी, मृगशिरा, श्रवण, विशाखा, उत्तरफाल्गुनी, हस्त।
शुभ चौघड़िये: शुभ, लाभ और अमृत।
शुभ लग्न: लग्न में स्थिर लग्न को श्रेष्ठ माना जाता है। स्थिर लग्न है- वृषभ, सिंह, वृश्चिक, कुंभ।
दिशा: पूर्व, उत्तर, ईशान कोण (पूर्व-उत्तर के मध्य)।

मंत्र साधना में चंद्रबल

मंत्र साधना में चंद्रबल महत्वपूर्ण स्थान रखता है। चंद्र मन का कारण है। अत: चंद्रमा ही मानसिक उथल-पुथल व एकाग्रता का कारण बनता है। साधना में एकाग्रता बनी रहे। अत: पूर्ण व बली चंद्रमा में ही साधना प्रारंभ करनी चाहिए तथा साथ ही जन्म राशि से चतुर्थ, अष्ट, द्वादश तथा घाती चंद्रमा का वर्जन करके ही साधना का शुभारंभ श्रेयस्कर होता है।

मास, वार एवं वारानुसार फल

मंत्र साधना प्रारंभ करने की तिथि, वार, मास आदि का भी प्रभाव अलग-अलग ढंग से पड़ता है। अत: जिस कार्य के लिए साधना की जा रही है, उसके अनुरूप दिन का चयन करते समय प्रमुख रूप से इस बात का भी ध्यान रख लेना चाहिए कि इससे जिस मंत्र की साधना की जा रही है, उस मंत्र की विधि में कोई बाधा नहीं आ रही हो। ये फल सामान्य रूप से समझकर जिस मंत्र की साधना प्रारंभ कर रहे हैं, उसमें दिये गये तिथि, वार एवं मास आदि का प्रयोग करना ज्यादा उचित रहता है। यदि किसी मंत्र की विधि वगैरह प्राप्त न हो तो उनमें से शुभ, तिथि, वार, मास आदि का चयन करना चाहिए।

मंत्र संख्या एवं समयावधि

मंत्र जप कितनी संख्या में करना है, यह निर्धारित कर लेना चाहिए। जैसे 12,500, 42,000, सवा लाख, सवा करोड़ इत्यादि। निर्धारित जप संख्या को कितने दिनों में पूरा करना है। जैसे 21 दिन में सवा लाख का जाप करना है तो प्रतिदिन 6000 अर्थात 60 माला फेरने से 21 दिन में 1,26,000 का जाप हो जायेगा या अंतिम दिन 50 माला फेरने से पूरा 1,25,000 का जाप हो जायेगा। माला के मंत्र संख्या गिनते समय 108 मनकों की संख्या को 100 ही गिनना है, आठ मनके छोड़ देने चाहिए ऐसा मंत्र शास्त्रों में विधान आता है।

मंत्र साधना में दिशा

मंत्र साधना करते समय एक दिशा निर्धारित कर उसी दिशा में जप करना चाहिए। बार-बार दिशा परिवर्तन नहीं करनी चाहिए। शुभ कार्यों के लिए पूर्व दिशा, उत्तर दिशा या पूर्वोत्तर दिशा (ईशान कोण) श्रेष्ठ रहती है। इनमें से किसी एक दिशा का निर्धारण कर लेना चाहिए। यदि मंत्र विधि में कोई निश्चित दिशा दी हो तो उसी अनुरूप दिशा का निर्धारण करना चाहिए। ग्रह दोष निवारण के लिए मंत्र साधना में ग्रहों के स्वामी की दिशानुसार जप करना श्रेष्ठ रहता है।

आसन

मंत्र साधना करते समय जमीन पर पत्थर या शिला पर आसन बिछाये बिना जप नहीं करना चाहिए। जप करते समय लकड़ी के पट्टे पर या नीचे जमीन पर ऊनी वस्त्र या कम्बल बिछाकर उस पर बैठकर ही जप करना चाहिए। इससे ज्ञान, सिद्धि एवं सौभाग्य वृद्धि होती है तथा पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण शक्ति ऊर्जा की रक्षा भी हो जाती है।

स्वप्न

मंत्र साधना का दिन, समय, मुहूर्त्त, चंद्रबल आदि का सम्यक् प्रकार से निर्धारण करने के पश्चात स्वप्न मंत्र से साधना की संपन्नता निर्विघ्न रूप से होगी, यह जानकर शुभ मुहूर्त्त में अनुकूल मंत्र की विधि अनुसार जप करने से निश्चित ही मंत्र सिद्ध हो जाता है। ■

मुनि राकेशकुमार

पारिवारिक शांति और समाधि का विकास

भगवान महावीर ने कहा है–''चित्त समाहिओ हवेज्जा'' जो सुखी और सफल जीवन जीना चाहता है, उसे चित्त समाधि का विकास करना चाहिए। साधारणतया समाधि का अर्थ पूर्ण निवृत्ति या जीवन का समग्र विसर्जन समझा जाता है। महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग में आठवें अंग के रूप में प्रयुक्त समाधि शब्द का यही अर्थ है। पर यहां समाधि के अनुभव की प्रेरणा दी गई है। परिवार और समाज में शांत सहवास का संस्कार जागे, इसके साथ यह भी अभिप्रेत है। जो समाधिस्थ होता है, वह अपने जीवन में निर्द्वन्द्व रहता हुआ स्वयं शांति से जीता है दूसरों की शांति का सतत ध्यान रखता है।

आध्यात्मिक साधना के लिए समाधि का महत्व सर्वविदित है। उसके बिना अन्य सारे अनुष्ठान निष्फल हो जाते हैं। सामाजिक जीवन भी उसके अभाव में सुखद नहीं हो सकता। आज ज्ञान-विज्ञान की दिशा में मानव ने अद्भुत विकास किया है। इसके साथ आर्थिक विकास के नए-नए आयामों का उद्घाटन हो रहा है। जो भौतिक सुख-सुविधाओं के साधन दशकों पूर्व सत्ताधीशों व विरले धन कुबेरों के लिए सुलभ थे, आज वे जन-साधारण के लिए सुलभ हो रहे हैं। फिर भी मानव की जीवनशैली पहले से अधिक जटिल और तनावग्रस्त है। पारिवारिक और सामाजिक जीवन में टकराव और बिखराव के स्वर प्रतिध्वनित हो रहे हैं। इसके साथ ही नाना प्रकार के मनोरोग बढ़ रहे हैं। उनके निवारण के लिए नशीले पदार्थों और रसायनों का सेवन किया जा रहा है। इन समस्याओं का मूल कारण चित्त समाधि का अभाव है।

यह वर्तमान का ज्वलंत प्रश्न है। इसका समाधान आध्यात्मिक भूमिका पर ही हो सकता है। भौतिक आमोद-प्रमोद से जो क्षणिक शांति और तृप्ति मिलती है, वह चित्त समाधि नहीं है। यह क्षणिक तृप्ति जीवन में नई समस्याएं उत्पन्न करती हैं। हमें जिस चित्त समाधि का विकास करना है, उसका संबंध नैसर्गिक शांति और आनंद से है। वह पदार्थ और परिस्थिति सापेक्ष नहीं है। वह आत्मानन्द का रूप है। संयम, समता, सहजता और शांति आदि अध्यात्म के आदर्शों का आलम्बन लेकर हम चित्त समाधि का जीवन जी सकते हैं।

''इच्छा हु आगास समा अणंतया'' इच्छाएं आकाश के समान अनंत हैं। जिस प्रकार आकाश का किनारा पाना संभव नहीं हैं, उसी प्रकार इच्छाओं का भी किनारा संभव नहीं है। चित्त समाधि के लिए इच्छाओं का संयम करना जरूरी है। जिसका विवेक जागृत होता है, वह उचित-अनुचित के आधार पर इच्छाओं का परिष्कार करता है। जो अनुचित और अवांछनीय होती है, वह उनका साहस से परित्याग करता है। संयम की साधना के लिए इच्छाओं का परिष्कार और संशोधन करना जरूरी है।

संयम और शांति-समाधि का अविनाभावी संबंध है। संयम के अभाव में सच्ची शांति का स्वप्न साकार नहीं हो सकता। शांति और समाधि के अभाव में सम्राट होकर भी मनुष्य भिखारी के समान होता है। वह राजप्रसादों में रहकर भी सुख का अनुभव नहीं कर सकता।

जिस प्रकार मौसम के रंग बदलते रहते हैं, उसी प्रकार हमारे मिजाज के रंग भी बदलते रहते हैं। यह विषमता की स्थिति है। चित्त समाधि के लिए समता का अभ्यास जरूरी है। आज मैनेजमेंट (प्रबंधन) की विविध शाखाओं का प्रशिक्षण दिया जाता है। पर जब तक 'मूड मैनेजमेंट' का प्रशिक्षण नहीं होगा, तब तक मैनेजमेंट का सारा विषय अधूरा है। संसार में कोई शरीरधारी प्राणी पूर्ण स्वतंत्र नहीं है। उसके हाथ में केवल कर्तव्य का पालन करना है। कभी थोड़े परिश्रम में सफलता मिलती है, कभी बहुत श्रम करने पर असफलता हस्तगत होती है। हर व्यक्ति को इन अनुकूल और प्रतिकूल अनुभवों का सामना करना होता है। उसका जीवन कलापूर्ण होता है जो दोनों प्रकार के परिणामों को प्रसन्नता से स्वीकार करता है। अंग्रेजी भाषा के इस सुभाषित का यही संदेश है 'डोन्ट एक्सपेक्ट, बट एक्सेप्ट'। धर्मग्रंथों में भी इस विषय पर मार्मिक प्रकाश डाला गया है तथा फल की आकांक्षा से दूर रहने की प्रेरणा दी गई है। जैन मुनि के लिए बावीस परीषहों का विधान है। उनमें अलाभ परीषह है। यदि मन के अनुकूल लाभ नहीं मिले तो भी समाधि का अनुभव करना चाहिए, यह अलाभ परीषह का संदेश है।

चित्त समाधि के संदेश का व्यावहारिक जीवन के लिए भी बहुत महत्व है। इसके बिना शांति सहवास की भूमिका का निर्माण नहीं हो सकता। इस संदर्भ में सहजता की साधना विशेष उपयोगी है। अपने साथियों के प्रति जो नम्र और उदार होता है, उसका व्यवहार सहजता और समानता की भावना से ओतप्रोत होता है। वह सत्ता और सफलता के शिखर पर आरूढ़ होकर भी सहज होता है। वह अपने विचारों और अधिकारों के साथ दूसरों के विचारों और अधिकारों का सम्मान करता है। स्थानांग सूत्र में अभिमान के आठ प्रकार बताये हैं। जो इनसे परहेज रखता है, सहजता की साधना वही मनुष्य कर सकता है। आज व्यक्तित्व के टकराव की जटिल समस्या है। अनेक परिवारों और समूहों का विघटन इसके कारण हो रहा है।

मनुष्य मशीन का प्रोडक्शन नहीं है। उसमें सब बातों की एकता और समानता संभव नहीं है। वह एक विचारशील प्राणी है। उसमें मतभेद और संस्कारभेद होना स्वाभाविक है। पर जहां शांति और सहिष्णुतापूर्ण व्यवहार होता है, वहां भेद में भी अभेद तथा विषमता में भी समता का अनुभव हो सकता है। चित्त समाधि के लिए इस प्रकार की अनुभूति का जागरण जरूरी है। जहां एक से अधिक व्यक्ति साथ में रहते हैं, वहां अगर शांत और सुखद वातावरण रहता है तो वर्तमान युग में बहुत आश्चर्य का प्रसंग माना जाता है। शांति और सहिष्णुता के अभाव में लोग एकल परिवार की परम्परा का अनुसरण कर रहे हैं। यदि किसी को कोई सुझाव भी देना हो तो मधुर और शांत भाषा में देना चाहिए। यदि खरी बात में भी खारापन आ जाता है तो उसका महत्व कम हो जाता है। पारिवारिक शांति और समाधि के लिए प्रेक्षाध्यान का अभ्यास बहुत उपयोगी है। यदि परिवार के सभी सदस्य नियमित रूप से साधना करें तो उनके स्वभाव में परिष्कार हो जाएगा तथा वे चित्त समाधि का रसास्वादन कर सकेंगे। ■

अविवेक

किरण बाला

दाम्पत्य में बात का बनता बतंगड़

पति-पत्नी के बीच प्यार होना चाहिए, तकरार नहीं। तभी दाम्पत्य का सुख है।

दाम्पत्य का सुख तभी तक है, जब तक पति-पत्नी के बीच एक अच्छी समझ हो तथा वे एक-दूसरे के विचारों का आदर करते हुए उसके अनुरूप ढलने की कोशिश करें, लेकिन आज स्थिति यह है कि छोटी-मोटी बातें, जिन्हें आसानी से नजर अंदाज किया जा सकता है, उसको लेकर पति-पत्नी के बीच तकरार उत्पन्न होने लगती है और रिश्तों की मिठास खत्म होने लगती है।

पति-पत्नी के बीच विवादों की कोई ठोस वजह होना जरूरी नहीं है। मुद्दा कुछ भी हो सकता है। जैसे घुमने कहां जाए या दीवारों पर कौन सा रंग करवाएं, तुम्हारी फलां आदत अच्छी नहीं है, ससुराली रिश्तेदार की किसी बात को लेकर या बच्चों में अनुशासन को लेकर भी तनाव पैदा हो जाता है और बहस शुरू हो जाती है। यदि पति-पत्नी में धैर्य और सहनशीलता की कमी है तो बहस और लड़ाई थमने का नाम नहीं लेती।

पति-पत्नी के बीच तू-तू, मैं-मैं परिवार की प्रतिष्ठा को धूमिल करती है तथा घर से बाहर कदम रखते ही लोग तरह-तरह की बातें करने लगते हैं। कोई पति को दोष देता है, तो कोई पत्नी को।

तुनकमिजाज दंपत्तियों की आपस में निभ नहीं सकती। एक का अहं और दूसरे का हठ उनके रिश्तों के बीच एक दीवार बनकर खड़ा हो जाता है। वे रहते तो एक छत के नीचे हैं, लेकिन एक-दूसरे को बर्दाश्त नहीं कर पाते। इनमें से कुछ दंपत्तियों के बीच तलाक हो जाता है और कुछ तो उम्र लड़ते-झगड़ते रहते हैं।

कई दंपत्ति आपसी झगड़े को जीत और हार का सवाल बना लेते हैं जिससे तनाव और बढ़ जाता है। कभी-कभी अपने पार्टनर को ही सही मान लें। इससे बात बढ़ेगी ही नहीं और शायद पार्टनर को भी अपनी गलती का अहसास होगा। लड़ाई के वक्त एक के शांत हो जाने से बात खत्म हो जाती है। इसे अपनी हार नहीं मानें। आपके मधुर व्यवहार का आपके पार्टनर के दिल पर गहरा प्रभाव पड़ेगा और इससे आपकी ही जीत होगी। 'सॉरी' बहुत ही छोटा सा शब्द है, लेकिन इसका प्रभाव बहुत गहरा होता है। यह सोचें कि आप भी तो परफेक्ट नहीं है। आपसे भी गलतियां हो सकती हैं। अत: अपने ईगो का त्याग करें।

पति-पत्नी के बीच प्यार होना चाहिए, तकरार नहीं। तभी दाम्पत्य का सुख है। जो दंपत्ति रोज लड़ते हैं, झगड़ते हैं, उन्हें चिंतन करना चाहिए और सामने वाले में दोष ढूंढ़ने की बजाय स्वयं अपने भीतर झांककर देखना चाहिए कि इसके लिए स्वयं वे ही दोषी नहीं है?

-43/2, सुदामा नगर, रामटेकरी, मंदसौर-458001 (म.प्र.)

मंत्रों द्वारा रोग चिकित्सा

अनोखीलाल कोठारी

शब्द स्वयं एक शक्ति है-किन्तु उससे अधिक उसके पुनरावर्तन में और उससे भी अधिक उसके सूक्ष्म (अशब्द) होने में हैं। ध्वनि जितनी अधिक सूक्ष्म होती है उतनी ही वह भेदक व आकर्षक होती है। नमस्कार महामंत्र सभी विद्या और मंत्रों में प्रधानमंत्र है- विद्या प्रवाद नाम का दसवां पूर्व जो मंत्रों का अक्षय भंडार है, उसका शुभारंभ भी अचिंत्य चिंतामणी महामंत्र नवकार से हुआ है। तत्वत: सभी मंत्रों और ध्वनियों का मूल आधार यही नवकार महामंत्र है। मंत्र साहित्य पुस्तक में किस महामंत्र में सभी मातृकाएं (वर्णमाला अक्षर) तथा शक्ति बीज प्रयुक्त हुए हैं। अचिंत्य चिंतामणि महामंत्र से कैंसर, ट्यूमर जैसे असाध्य रोग ठीक हुए हैं। सभी बुखार में भी लाभदायक है। अक्षरों में रही हुई शक्ति के ये प्रयोग देखिए...।

- 'र' के एक हजार बार (सानुनासिक) लम्बे उच्चारण करने से शरीर में एक डिग्री ऊष्णता बढ़ती है।
- 'ख' के एक हजार बार लम्बे उच्चारण से शरीर में इतनी ऊष्णता बढ़ती है कि सर्दी का बुखार भी मिट जाता है।
- लीवर ठीक करने के लिए- 'स' का चंद्र बिन्दु सहित हजार बार उच्चारण करने से लीवर में ऐसा संघर्ष उत्पन्न होता है, जिससे बढ़ा हुआ लीवर कुछ ही दिनों में ठीक हो जाता है।
- हिस्टीरिया बीमारी शांत करने के लिए- 'ओ' के साथ 'म', 'ह' के साथ 'री', 'स' के साथ 'री' इन अक्षरों का लगातार एक हजार बार नाद करने से वातजन्य हिस्टीरिया जैसी भयंकर बीमारियां धीरे-धीरे शांत होने लगती है।

अगर शब्द के उच्चारण से भी रोग ठीक हो जाते हैं तो अड़सठ अक्षरों वाले नवकार से कौन-सी बीमारी दूर नहीं हो सकती, चाहिए तो सिर्फ नवकार में अटूट श्रद्धाभक्ति? सिर्फ मलेरिया, डेंगू, टाइफाइड, कैंसर, जोइन्डिस, टयूमर जैसे बाध्य रोग ही नहीं बल्कि क्रोध, मान, माया, लोभ, रागद्वेष, ईर्ष्या जैसे अनेक अभ्यन्तर-आंतरिक रोगों का नाश इसी महामंत्र से होता है। अत: आप दिन-रात नवकार महामंत्र का रटण एवं स्मरण-चलते हुए, घूमते हुए, बैठे हुए खड़े हुए कहीं भी किसी भी प्रकार से जप श्रद्धापूर्वक करना चाहिए, जिससे आप आंतरिक तथा बाह्य अनेक रोगों से बचकर शरीर को स्वस्थ रख सकते हैं।

-महावीर मार्ग, ठोकर-आयड, उदयपुर (राजस्थान)

● कला ●

पुखराज सेठिया

थंका चित्रांकन संपन्न होने के बाद बड़ी धूमधाम से समारोहपूर्वक उसकी प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है। बिल्कुल वैसे ही जैसे अपने यहां मंदिरों में देव-प्रतिमाओं की।

बड़े चमत्कारी हैं थंका चित्र

हिमालय के उत्तरी छोर पर स्थित है बौद्ध लामाओं का राज्य तिब्बत और इसी के पश्चिमी सीमा से बिल्कुल लगा हुआ है जम्मू और कश्मीर राज्य का पूर्वी संभाग लद्दाख। तिब्बत और लद्दाख-ये दोनों ही सदियों से बौद्ध धर्म के गढ़ रहे हैं। हाल में ही अपनी लेह-लद्दाख की यात्रा में मुझे इसकी सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक विरासत को निकट से देखने और समझने का अवसर मिला। यहां स्थान-स्थान पर बौद्ध मठ, विहार, चैत्य आदि बिखरे पड़े हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो यहां प्राचीन तंत्र-मंत्र, सिद्धियों और रहस्यों का विपुल खजाना भरा हुआ है। यहां 'शे', बास्गो, तिंगमास्गांग, लेह पैलेस, थिकसे गोम्पा, अलची गोम्पा, लिकीर गोम्पा, देवार्चन, महाबोधि इंटरनेशनल सेंटर आदि प्रमुख स्थानों में दीवारों पर टंगे पट (कपड़ों) पर उकेरे गए चित्र देखे जा सकते हैं। बौद्ध लामाओं की भाषा में इन्हें थंका कहते हैं। इन मठों में स्थित इन थंका चित्रों को देखकर मन में सहज ही एक जिज्ञासा का भाव जागता है। आइये देखें, क्या है ये थंका चित्र-

थंका दीवार पर सजावट के लिए लगाए गए कोई सामान्य चित्र नहीं है। एक बहुत बड़ा रहस्य छिपाए हुए हैं ये स्वयं में। विधि-विधान और अनुष्ठानपूर्वक स्थापित किये गए थंका में चमत्कारिक शक्ति आ जाती है। इन्हें देखने पर एक अजीब तरह का खिंचाव अनुभव करता है आदमी। आभास होता है कि चित्र में कोई स्पंदन-सा हो रहा है। कहा जाता है कि विधिवत प्राण-प्रतिष्ठा के पश्चात थंका में वह शक्ति आ जाती है कि दोषी को वह दंडित कर सके और भले तथा ईमानदार श्रद्धालु को पुरस्कृत उपकृत। कैसे होता है थंका में इस तरह की अलौकिक शक्ति का संचार-इसका रहस्य इनके निर्माण और इनकी स्थापना की विधि में छिपा हुआ है।

कैसे होता है थंका का निर्माण?

थंका का निर्माण तीन प्रकार से होता है। एक तो एम्ब्राइडरी यानी कढ़ाई/कसीदेकारी के द्वारा। दूसरे एपलिक अर्थात्/रंगीन कपड़ों को काट-छांट कर उसकी कतरनें चिपका कर। तीसरी विधि है तैल रंगों से चित्रित करने की। कुछ थंका में तीनों विधियों का समन्वय होता है। थंका का निर्माण एक विशुद्ध धार्मिक प्रक्रिया है। हमारे यहां मूर्तियों का निर्माण शिल्पी के द्वारा होने के पश्चात स्थापना के समय धार्मिक क्रिया प्रारंभ होती है। थंका के निर्माण के समय ही यह क्रिया प्रारंभ हो जाती है।

एक निश्चित और निर्धारित अनुष्ठान से शुरू होती है थंका के निर्माण की प्रक्रिया। निर्माण के समय चितेरे कलाकारों को व्रत रखना पड़ता है। प्रारंभ पूजा से होता है। यह पूजा निर्माण की क्रमिक अवस्था से उसके विभिन्न चरणों तक बराबर चलती रहती है। प्रार्थना और मंत्रोच्चार का क्रम अनवरत जारी रहता है। थंका का निर्माण किसी निपुण और धार्मिक क्रिया के जानकार किसी लामा के द्वारा होता है। जो कलाकार थंका का निर्माण करते हैं, वे सब प्राय: उसी लामा के शिष्य होते हैं। अत्यंत श्रद्धा के साथ निर्माण की यह प्रक्रिया प्रारंभ होती है एक आधार पट के साथ। यह पट मजबूत कपड़ा, कैनवास अथवा सुंदर रेशम कुछ भी हो सकता है। इस

अपेक्षित आकार के वस्त्रखंड को गीला करके उसके एक फ्रेम में जड़ (कस) देते हैं। फिर उस पर दोनों ओर से प्लास्टर ऑफ पेरिस या चूने की पोताई कर दी जाती है। सूख जाने पर चिकने पत्थर या सीपियों से घिसाई होती है। कई दिनों तक लगातार घिसाई के बाद इमसें शीशे जैसी चमक आ जाती है। अब फ्रेम के जड़े आधार पट को श्रद्धापूर्वक अपने घुटनों पर रखकर कलाकार अत्यंत सावधानी और मनोयोगपूर्वक उसे चित्रित करने का काम करता है।

थंका के चित्रांकन में सर्वप्रथम एक खड़ी रेखा का निर्माण होता है। यह ब्रह्मरेखा है, जिसे जीवन की धुरी भी कह सकते हैं। संपूर्ण ब्रह्माण्ड इस धुरी या कील पर घूर्णन कर रहा है। यही सुमेरु पर्वत है। पृथ्वी के केन्द्र में स्थित इसी सुमेरु पर्वत की देदीप्यमान शिखरों पर श्रेष्ठ आत्माओं का निवास है। यह ब्रह्मरेखा ही प्राणियों के शरीर में मेरुदण्ड के रूप में विद्यमान है।

थंका का निर्माण बहुत मद्धिम गति से चलता है। इसमें विभिन्न प्रकार के चित्रांकनों के दिन, तिथि निर्धारित हैं। बुद्ध अथवा उनके पूर्वजन्म के भवों (बोधिसत्वों) की आकृति पूर्णिमा के दिन बनाई जाती है और उनमें रंग भरने का काम होता है शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को।

दिव्य पुरुषों के प्रभामंडल को विभिन्न रंगों से बनाया जाता है। इस आभामंडल का भीतरी चक्र प्राय: नीला और उसमें केन्द्र से परिधि की ओर जाती हुई सुनहरी किरणें उत्कीर्ण की जाती है। भगवान बुद्ध खिले हुए कमल के आसन पर बैठे चित्रित किये जाते हैं। हाथों को चित्रित करते समय सर्वाधिक महत्व दिया जाता है

थंका के चित्रांकन में यद्यपि सबसे ज्यादा अंकन बुद्ध और बोधसत्वों का है, फिर भी मनुष्य का जीवन और कार्य भी उसमें उकेरे जाते हैं।

हथेलियों की मुद्रा को। मंत्र और मुद्रा–ये दो ऐसे साधन हैं, जिनके द्वारा ब्रह्मांड में प्रवेश के द्वार खुलते हैं। यहां यह ध्यान देने वाली बात है कि थंका का निर्माण ध्यान और योग में निष्णात व्यक्ति के द्वारा होता है। वह जिसका रूप बनाता है, उससे स्वयं भावात्मक रूप से जुड़ता है। पहले अपने कल्पनाचक्षु में उसका निर्माण करता है, फिर उस आकृति को वस्त्र पर चित्रित करता है। वह अपने को पूर्ण रूप से आध्यात्मिक स्तर पर खड़ा कर समूचे ब्रह्मांड को स्वयं में धारण कर लेता है। उसी का प्रतिबिम्ब आकृति में उतरता है।

थंका के चित्रांकन में यद्यपि सबसे ज्यादा अंकन बुद्ध और बोधसत्वों का है, फिर भी मनुष्य का जीवन और कार्य भी उसमें उकेरे जाते हैं। आकाश को चूमते धवल पर्वत और लहलहाते खेत और हरी-भरी धरती। अंधेरे कोने का कहीं नाम-निशान नहीं। रात्रि का कहीं चित्रांकन है भी तो अत्यंत पारदर्शी। थंका की विषयवस्तु पर भारतीय प्रभाव बहुत गहरा है। भारतीय संस्कृति की गहरी छाप दिखाई देती है।

थंका चित्रांकन संपन्न होने के बाद बड़ी धूमधाम से समारोहपूर्वक उसकी प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है। बिल्कुल वैसे ही जैसे अपने यहां मंदिरों में देव-प्रतिमाओं की। बड़ी आश्चर्यजनक बात है कि प्राण-प्रतिष्ठा के बाद कपड़े पर बनी तस्वीर में एक अद्भुत चमक आ जाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे तस्वीर में स्पन्दन हो रहा है। प्राण-प्रतिष्ठा के पश्चात थंका विधिवत मंत्रोच्चारपूर्वक दीवार पर स्थापित कर दिया जाता है।

–9, लाजपत राय मार्केट, चांदनी चौक, दिल्ली-11006

बाल दिवस पर

उस बच्ची ने दी सीख

दिलीप भाटिया

मैं स्कूल-कॉलेज में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण सदुपयोग एवं विकिरण से बचाव के लिए सावधानियों पर व्याख्यान देने जाता रहता हूं। एक बार समीप के गांव के एक स्कूल में गया था।

व्याख्यान समाप्त होने पर आठवीं कक्षा की एक छात्रा ने कहा, ''सर, आप हमें विकिरण से बचाव की सावधानियां बता रहे हैं, पर हम गरीब घरों की संतानें हैं। हमारे पास सर्दी से बचाव के लिए गर्म कपड़े नहीं हैं, हमारे नंगे पांव धूप में जलते हैं, सर्दी में ठिठुरते हैं, वर्षा में भीगते हैं। कोर्स की किताबें तो सरकार हमें दे देती हैं, पर मेरे बापू के पास डिक्शनरी एवं गाइड दिलवाने के लिए पैसे नहीं हैं। रेखागणित के प्रश्न हल करने के लिए त्रिभुज, वृत्त, समकोण बनाने के लिए हमारे पास ज्योमेट्री बॉक्स नहीं है। सर, विकिरण (रेडियेशन) तो बहुत बाद की चीज है। परमाणु ऊर्जा पर जानकारी महत्वपूर्ण है, पर हमारे स्कूल के वाचनालय में तो बच्चों की कोई मैगजीन तक नहीं आती है। सर, इस पर भी तो आप सोचिए न।''

उस भोली स्पष्टवादिता से मैं हिल गया। मेरी बेटी के पास आक्सफोर्ड की डिक्शनरी है एवं हर सूट के साथ पहनने के लिए मैचिंग कार्डिगन है। उसके पास कई-कई जोड़ी चप्पलें और सैंडिल हैं। उसके पास हर तरह की गाइड और मॉडल पेपर हैं। उस छात्रा ने मेरी आंखें खोल दीं। मैंने वेतन से प्रतिमाह कम-से-कम 100 रुपये गरीब छात्र-छात्राओं के लिए अलग रखने का संकल्प लिया। तीन वर्ष से लगातार मैं प्रतिवर्ष एकमुश्त राशि इन निर्धन, परन्तु होनहार छात्र-छात्राओं के लिए स्कूल में दे देता हूं। मेरी बेटी के पुराने कार्डिगन भी इनके लिए सर्दी से बचाव के लिए अनमोल हैं। अपने संपन्न मित्रों के बच्चों पर गिफ्ट लुटाने से अधिक सार्थकता मुझे इन निर्धन छात्र-छात्राओं के लिए कुछ करने पर महसूस हुई। स्कूल के वार्षिकोत्सव में जब इन छात्राओं ने मुझे गांव में उपलब्ध जंगली फूलों का गुलदस्ता भेंट किया, जो मुझे शहर के महंगे पुष्पगुच्छों की तुलना में अत्यंत मूल्यवान लगा।

मेरी आंखें खोलनेवाली उस छात्रा को जब बोर्ड की परीक्षा में 75 प्रतिशत से अधिक नंबर मिले और राज्य सरकार से गार्गी पुरस्कार मिला और जब वह छात्रा मेरे घर मुझसे आशीर्वाद लेने आई एवं उसने अपनी उपलब्धि का श्रेय मुझे दिया, तो मुझे लगा कि अब तक मिले शॉल, ट्राफी, शील्ड, पुरस्कार सभी बेस्वाद थे, असली स्वाद तो इनके निर्मल स्नेह, आत्मीय प्यार, नि:स्वार्थ सम्मान से मुझे मिला है।

–टाइप 5/5, अणुकिरण, रावतभाटा-323307

The inner perfection

Sri Sri Ravi Shankar

In a state of ignorance, imperfection is natural and perfection is an effort. In a state of wisdom or enlightenment, imperfection is an effort; perfection is a compulsion and is unavoidable!

Perfection is taking total responsibility, and total responsibility means knowing that you are the only responsible person in the whole world. When you are in total vairagya (dispassion), you can take care of even trivial and insignificant things with such perfection. Perfection is the very nature of the enlightened one.

Knowledge will be different at different levels of consciousness. At a particular level, you will become anasuya (devoid of fault-finding eyes). There is a certain mindset that always finds fault, even in the best of conditions. That kind of mindset cannot know the sacred knowledge. From a distance, even craters cannot be seen and at the same time there will be holes even on a smooth surface.

If you are only interested in the holes, you will not see the magnanimity of things. If you are anasuya, knowledge cannot blossom in you. If you look for imperfection, you can see imperfection even in Rama and Krishna. If Krishna had been living today, then probably there would have been many court cases filed against him for telling lies, stealing, etc!

In a perfect world, why is man so imperfect? It is so to help you become more perfect. There are three kinds of perfection — perfection in action, perfection in speech and perfection in feelings/intention. Recognition of imperfections leads you to more perfection.

This is a very delicate point as you may just sulk and brood over it when you recognise imperfection. Recognise the imperfection in you and overcome it by seeing more perfection.

Be thankful for all the qualities you have. These qualities are not of your own making and they depend on the part that you have been given to play. When you understand this basic truth, then your inner perfection becomes stable. Psychologists often say there is fear, guilt and anger deep inside. These psychologists know nothing about the mind or consciousness. I tell you that deep inside, you are a fountain of bliss, a fountain of joy!

The peak of every emotion, every sensation leads you to blossoming, to the innermost perfection. Don't look for perfection just in actions. There will be flaws even in the best of actions. Even when you give alms or charity, you are bringing down the self-respect of the receiver. But perfection in feeling is possible.

Perfection in speech is possible to a great extent and to a greater extent, perfection in action is also possible. Even if distortions and imperfections come in your way, don't give them too much importance for they are like the wrinkles in a cloth. If you give importance to somebody's anger, greed or lust, they take a permanent place in your mind at some point of time.

If you nourish the distortions inside you, they change from one impurity to another and keep on multiplying inside you. So relax and know that you are not the doer. That is the only way you can remain centred. ■

Nature of spirituality

Ramnath Naryanswamy

Spirituality is the uncompromising search for absolute truth. It is the relentless search for inner truth. The seeker is aware that this truth cannot be known and that it can only be experienced.

He is equally aware that it is to be found within himself and outside himself. The late Sri Sathya Sai Baba used to say: "Watch your thoughts, they become words! Watch your words, they become actions! Watch your actions, they become habits! Watch your habits, they become character! Watch your character, they become destiny!"

While the call to become spiritual and experience the universe around us in spiritual terms is universal, not everybody can embrace this path all at once. It is not given to all. There is a time and place for that to happen but it is up to us to create and hasten that opportunity.

According to Sadguru Sri Sharavana Baba, taking up the spiritual path requires a certain yogam or destiny. It is open to all human beings to create this destiny for themselves through tyagam or sacrifice. Selfless service according to the master constitutes such sacrifice.

Consider for example, the Navarathri message of Sadguru Sri Sharavana Baba: Om Sharavanabhava! Blessings for Self Awareness! May all evils be destroyed! May all good things come your way! Blessings for your good health! Blessings for your happiness!

Blessings for your all round well-being! May all of you have occasions for serving the under privileged! May every child go to School! May all of them be educated in a joyful manner! Through learning, may they grow wise and enlightened!"

"May the blessings of the Divine Mother make everything auspicious! Pray

to the Almighty Mother to help us overcome all natural disasters, all mental agony and sadness and all physical ailments! May all impediments to the performance of good karmas be removed! May all family sorrows and problems be destroyed!

"Let us come together to offer a million prostrations at the lotus feet of the Divine Mother on the sacred occasion of Navarathri and pray for self confidence, health and prosperity and knowledge and enlightenment. Lead us Divine Mother from multiplicity to unity and may peace prevail in all the worlds!"

The love and compassion that a realized master radiates is easily evident from the above lines. Their lives are completely devoted to the upliftment of the universe. They spare no effort to work towards that end. It is very difficult for the ordinary person to understand this aspect of a Mahatma because spiritual truths require subtlety of mind and suppleness of intellect to grasp the insights contained in them. Steadfast in truth, such a blessed one is completely above all duality ■

Tolerance is hallmark of being religious

Acharya Mahaprajna

The first criterion of a religious person is tolerance - the capacity to put up with a particular situation.

He never tries to avoid pain or hardship. The person who demands not to be disturbed in any way extinguishes all possibility of achievement. Will the law of nature or the law of karma send change for him? A religious person never wishes to subvert the truth.

The world is all conflict. The Sanskrit word, dwandw, has two connotations - It means 'two' and it also means 'conflict'. Wherever there are two persons, conflict is bound to be. To be born in this dualistic world and to expect that a man should never experience pain, a hostile predicament or hardship! It is just not possible. To think in terms of a life totally free from conflict is sheer idiocy.

If even a religious person is subject to suffering, what is the utility of religion? Such a question might arise. The answer is very clear.

Religion affords a man power to bear pain. When confronted with suffering, a religious person does not wail or cry, on the contrary, he accepts it with joy. The religious person is as much subject to disease, old age and death as the non-religious. The only difference is that the non-religious person laments and whines in pain, even to the extent of waking up the neighbour; whereas the religious person bears it calmly. The others do not even come to known that he is in pain.

Kundanmalji Swami's is a case in point. He suffered from a painful wart. The doctor said it must be incised. Chowthmalji Swami began the operation with a scissors. Kundanmalji kept sitting like a statue, without anaesthetic. He said, "Chowthmalji! Kindly cut it off at one go!" How does one find the energy to bear things calmly!

Those who learn to discriminate between the body and the soul, who come to realize that the body and the soul are different from each other, develop the power of tolerance.

Giving man the secret of a happy life, Bertrand Russel said - "Only that man is happy who does not abruptly cut off his relationship with other people and does not allow it to become strained. The man who respects another person's individuality and takes joy in establishing intimacy with the whole of human society is always happy."

Tolerance is the consummation of forgiveness. Here, the question of age does not arise. The elderly people treat the young with forbearance and the young treat their elders likewise. In this mutual forbearance, no obligation is involved; it only inspires respect for oneself. ■

What You See Or Don't See

Shri Shri Anandamurti

What is this? "It is a flower." How could you say that it is a flower? Because particular light waves come and touch your eyes, and the flower is created in your mind. You are not seeing the flower; you are seeing the mental image of the flower. You don't see or hear anything, you don't even touch anything. When you see or touch something, corresponding sympathetic vibration is created in your mind. At that time, you feel that you are seeing the flower, or you feel that you are hearing a song, or touching something hot or cold.

You never come in physical contact with anything. Your contact with everything is through your mind, through your nerve fibres, nerve cells, and your entire objective mind. When you feel you see, it is an internal projection with the help of your nerves. It is a mystery that whatever you perceive or whatever you conceive - everything is within you, nothing is outside of you. Hence it is said that the entire universe is within you in miniature form. You are seeing the psychic projection of the material world, which is why i say that the human entity is more psychic than physical.

Your existence is more important in the psychic world than in the physical world. Human approaches are of two kinds - extro-internal and intro-external. Here is a flower. The waves move from the external world to the eye, then through the optic nerve to the nerve cells and finally to the brain. There, a similar flower is created according to the light waves that are outside your body. This movement is from external to internal. It is something external, and its creation is in your mind, that is external to internal. Extro-internal - created outside but going within.

There may also be intro-external movement, created in the mind and sent outside. Suppose you have created an elephant in your mind, and you have got a strong ectoplasmic structure. You create sympathetic vibrations outside. That external projection can be seen by you and by others. In your mind, you are creating an ectoplasmic elephant, and that elephant is projected outside. Others may see it. In psychology, it is called a "positive hallucination".

Similarly, suppose there is an external elephant, and with the help of your ectoplasmic power, you withdraw the light waves emanating from the external elephant. Everyone will see there is no elephant, although actually there is an elephant. This is called a "negative hallucination". Positive hallucination means that what appears to exist does not exist, and negative hallucination means that what actually exists appears not to exist.

Now, for you there are two worlds, the external and the internal. Waves from the outside enter the internal world, and ectoplasmic waves with a strong pressure may create strong extroversial waves. In order to create positive or negative hallucinations, there is always extroversial projection of your thought-waves.

Parama Purusha means He who, with His ectoplasmic force, is creating everything. When a man has got devotion, he may or may not be a scientist, but he may unify his existence with Parama Purusha because of his extreme love for the Divine. Then he has no separate identity. ■

सरोज छाजेड़

बाल मन की गहराइयां

हम सबको कई बार बच्चों के सामने इसी तरह निरुत्तर हो जाना पड़ता है। हमें इनकी कल्पनाशीलता एवं वैचारिक पकड़ पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। बच्चों के कोमल हृदय पर सृजन की अनेक कलियां खिलने को बेताब हैं, इनके अंत:आकाश में अनेक रेखाएं विस्तार पाने को उमड़ रही हैं, जिनमें समाज, देश व विश्व के विकास की नई संभावनाएं निहित हो सकती हैं। पर वास्तुवाद, उपभोक्तावाद व बहुराष्ट्रवाद की नई गुलामी के इस दौर में कल्पना के ये स्पंदनशील पुट भौतिक विकास की दौड़ के साथ सुरक्षित भी रह पायेंगे क्या?

हम अगर सावधान नहीं हुए तो सहजता और संवेदना के ये बिरवे टीवी संस्कृति, कम्प्यूटर और इंटरनेट की दुनिया में भटक जायेंगे। पाश्चात्यता की आंधी इन्हें शहरों की अपसंस्कृति में उड़ा ले जाएगी, जहां नैतिकता एवं जीवन मूल्यों की जगह क्लब, पार्टी, पैसा, शोहरत आदि के तराजू पर इनका जीवन तौला जाएगा। गंभीरतापूर्वक चिंतन की जरूरत है कि ऐसा भौतिक सुख और 'कैरियर' किस काम का जिसे पाने की होड़ में हमारे बच्चे हमसे इतनी दूर चले जाएं कि हमारी पुकार पर भी वापस न लौट सकें और उनका भविष्य कभी न समाप्त होने वाली काली-अंधेरी रात में बदल जाए। याद रहे, इस स्तर पर बच्चों को स्वेच्छाचारी बनाकर रख छोड़ना खतरे से खाली नहीं है, न बच्चे के हित में ही है।

व्यक्ति के जीवन-निर्माण का आधार संस्कार ही है। संस्कारों से ही व्यक्ति की श्रेष्ठता या निष्कृष्टता का पता चलता है। सद्संस्कारों से ही व्यक्ति में मानवीय मूल्य अनुप्राणित होते हैं, व्यक्ति अपने लिए, परिवार, समाज व राष्ट्र के लिए उपयोगी बनता है। परिणामत: मानव और मानवता दोनों प्रतिष्ठित होते हैं। पर प्रश्न है कि व्यक्ति को सद्संस्कारित कैसे किया जाए? संस्कार कैसे अर्जित होते हैं? इनका स्रोत क्या है?

अधिकांश माता-पिता बालसुलभ मन को समझ ही नहीं पाते हैं। इस वजह से भी माता-पिता और बच्चों के पारस्परिक संबंध सौहार्दपूर्ण नहीं होते। परिणामस्वरूप भावी पीढ़ी अनायास ही कुंठित, जिद्दी, चिड़चिड़ी और उच्छृंखल होती चली जाती है और संपूर्ण समाज-व्यवस्था को ही अस्वस्थ कर डालती है। बालकों और किशोरों में बढ़ते हुए अपराध इसके प्रमाण हैं। जिद्दीपन, उच्छृंखलता एवं चिड़चिड़ेपन का ही दूसरा नाम संस्कारहीनता है। जरा सोचें कि कौन बनाता है उन्हें संस्कारहीन? कौन उत्तरदाई है इस विकट समस्या के लिए?

तथाकथित आधुनिक संस्कृति एवं सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां इस समस्या के लिए उत्तरदाई हैं। आज की सामाजिक-पारिवारिक व्यवस्था बच्चों के शारीरिक, मानसिक विकास के तौर-तरीकों में परिवर्तन, पीढ़ियों के बीच बढ़ते अंतराल, व्यक्तिवादी मनोवृत्ति, नैतिक मूल्यों के क्रमिक ह्रास आदि कारण भी इस समस्या से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं। ऐसी हालत में बच्चों तक नैतिक मूल्यों की सम्प्रेषणीयता कैसे संभव हो, यह चिंतनीय पहलू है।

यूं तो इस समस्या पर अंकुश लगाने का काम बहुआयामी है। समाज की हर इकाई एवं संस्था की इसमें अपनी विशिष्ट भूमिका है, पर समाधान की बात तब तक नहीं सोची जा सकती तब तक शुरुआत घर से न हो। घर से शुरू होकर यह कार्य सामुदायिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचना चाहिए। एकल परिवार के इस युग में यह महत्वपूर्ण भूमिका माता-पिता को ही निभानी होगी। अत: सर्वप्रथम माता-पिता को पूर्वाग्रह और आत्मकेन्द्रितता की भावना से अपने आपको ऊपर उठाना होगा। साथ ही बच्चों के स्तर पर उतरकर उनके संसार को समझना होगा। मानना होगा कि बाल-संसार सर्वथा भिन्न संसार है। मां को सदाचार की प्रथम शिक्षिका और पिता को सही दिशा-निर्देशक बनना होगा। प्रेम, करुणा, श्रम, सेवा, सहिष्णुता, ईमानदारी, विनम्रता आदि मानवोचित गुणों के इन संस्कारों के साथ-साथ इस भोगवादी संस्कृति में एक महत्वपूर्ण संस्कार बच्चों को जो देना होगा, वह होगा 'त्याग का संस्कार'। सभी जानते हैं-त्याग का संस्कार जब जगता है तो हजारों गुण और अच्छाइयां स्वत: आ उपस्थित होते हैं और जब भोग का संस्कार जगता है तो हजार बुराइयां आ खड़ी होती हैं।

अधिकांश माता-पिता बालसुलभ मन को समझ ही नहीं पाते हैं। इस वजह से भी माता-पिता और बच्चों के पारस्परिक संबंध सौहार्दपूर्ण नहीं होते। परिणामस्वरूप भावी पीढ़ी अनायास ही कुंठित, जिद्दी, चिड़चिड़ी और उच्छृंखल होती चली जाती है और संपूर्ण समाज-व्यवस्था को ही अस्वस्थ कर डालती है।

आवश्यकता यही है कि माता-पिता स्वयं के जीवन में 'निज पर शासन फिर अनुशासन' को आत्मसात करते हुए अपने आचरण से बच्चों को सम्बोध दें, माता-पिता स्वयं संस्कारित बनकर बच्चों के जीवन में सद्संस्कारों के स्वस्तिक उकेरें। बच्चों के बाल सुलभ कौतूहल भरे प्रश्नों के संदर्भ में माता-पिता की यही महत्वपूर्ण भूमिका होगी। इसी में संपूर्ण मानवता का हित निहित है। ■

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन–जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई–मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

ई–253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली–110092

फोन: +91–11–26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

डॉ. रामसनेहीलाल शर्मा 'यायावर'

प्रिया तुम्हारा गांव

लोकजीवन के कवियों ने अपनी बात अनादि काल से दोहे के रूप में ही कही। दोहा सरलता से होठों पर बैठ जाता है। अशोक अंजुम दोहे के क्षेत्र में अपने संपादन और लेखन से अच्छी पहचान बना चुके हैं। कृति 'प्रिया तुम्हारा गांव' में अंजुम ने विविध विषयों पर दोहे लिखे हैं। इस दोहा संग्रह में 32 शीर्षकों में कवि के 380 दोहे संग्रहित हैं। दोहों के शीर्षक एक ओर तो उनकी विषय-केन्द्रिकता को प्रकट करते हैं वहीं दूसरी ओर वे कवि की संवेदना की भी सूचना देते हैं क्योंकि एक ओर इन शीर्षकों में 'पावस के अनुबंध' तथा 'गर्मी तानाशाह है' जैसे ऋतुपरक और प्रकृति-चित्रण वाले शीर्षक हैं तो दूसरी ओर 'मजहब के नाखून' तथा 'उत्तर औंधे मुंह पड़े' जैसे प्रतीकात्मक और समसामयिक जीवन की विसंगतियों की सूचना देने वाले शीर्षक भी हैं।

पिछले दो दशक के अंतराल में दोहे ने नई करवट ली है। यह लघुरूपा छंद शताब्दियों से अपने महत्व का लोहा मनवाता आ रहा है। आज यह फिर अपने नये रूप-रंग में साहित्य जगत् को गौरवान्वित कर रहा है।

कवि अंजुम ने समकालीन यथार्थ के अधिसंख्य आयामों पर दोहे लिखे हैं। गंगाजल का प्रदूषण, भगत के वेश में बगुलों की भरमार वाली दिल्ली, जहरीले जल का भार ढोती सरिता, सहमें चार चिनारों और डरी हुई डल झील वाला कश्मीर, आंगन-आंगन में खिंचती हुई दीवारें, दुनिया की धूप में असमय मुरझाता बचपन, भीड़ में खोते हंस, आंसू का व्यापार करते दुनिया के बाजार में खड़े विवश होरी और धनिया, विश्वास तोड़ते मित्र, दस्तूर बदलता मौसम, दिशाहीन सिद्धांत, विध्वंस रचते सत्ता के धृतराष्ट्र, पल में जिंदाबाद और अगले ही पल मुर्दाबाद करती राजनीति, कबीर से अधिक बलवान होता पैसा, प्यार को खूनमखून करते मजहब के नाखून जैसे समय के सभी दुर्दान्त सत्य इन दोहों में केन्द्रित हुए हैं।

कथ्य-शिल्प उत्तम जुगलबंदी लिए ये दोहे समय की सच्चाइयां उकेरते चित्र हैं।

पुस्तक : प्रिया तुम्हारा गांव
लेखक : अशोक 'अंजुम'
प्रकाशक : संवेदना प्रकाशन
ट्रक गेट, कासिमपुर-202127 (अलीगढ़)
मूल्य : रु. 100, पृष्ठ सं. : 80

चेतना के स्वर

ललित गर्ग

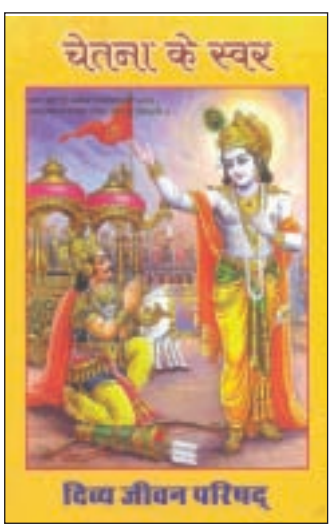

हम सभी जानते हैं कि हमारी आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत अत्यधिक समृद्ध है। संपूर्ण विश्व हमारे प्राचीन ऋषियों-मुनियों द्वारा प्रणीत आध्यात्मिक ज्ञान का लोहा मानता है। 'मानव जीवन का ध्येय', 'दुःख में खोजें सुख', 'जीवन का नियम है धर्म', 'सबसे बड़ी भूल', 'सत्य का मार्ग', 'समय का मूल्यांकन', 'आतुर है मिलने को भगवान', 'कर्म ही पूजा है' 'आत्मा की पुकार', 'सत्संग की महिमा' आदि शीषकों के माध्यम से कृति के लेखक ने कम शब्दों में बहुत कुछ कहने का प्रयास किया है।

'चेतना के स्वर' कृति में लेखक ने सारगर्भित आलेखों के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार मोहमाया के बंधन में उलझा हुआ व्यक्ति अपने समस्त कर्तव्यकर्मों को संपन्न करता हुआ परम लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकता है जिससे उसकी जीवन की सार्थकता प्राप्त हो सके।

लेखक 'समृद्ध सुखी परिवार' पत्रिका के नियमित लेखक है और समीक्ष्य कृति में प्रकाशित अधिकांश लेख इस पत्रिका में प्रकाशित हो चुके हैं।

पुस्तक : चेतना के स्वर
लेखक : ताराचंद आहूजा
प्रकाशक : दिव्य जीवन परिषद
4/114, एसएफएस, मानसरोवर, जयपुर
मूल्य : रु. 50, पृष्ठ सं. : 200

भाव सिन्धु

बरुण कुमार सिंह

विज्ञान के विकास ने आत्मा के मार्ग को अवरुद्ध कर दिया है। आज हम जितने साधन संपन्न हैं, हमारे जीवन में जितनी सुविधाएं हैं वैसी पहले कभी नहीं थी। फिर भी हमें जीवन में जिस आनंद, जिस सुकून, जिस मस्ती का अनुभव होना चाहिए वह नहीं होता है। लेखक ने इसी विषय की 'भाव सिन्धु' कृति में संक्षिप्त रूप से चर्चा की है। पुस्तक के सभी लेख और कविताएं जीवन के सारभूत तत्वों पर आधारित हैं।

पुस्तक : भाव सिन्धु
लेखक : ओम प्रकाश पोद्दार
प्रकाशक : प्रतिभा आर्ट्स, जयपुर
मूल्य : रु. 100, पृष्ठ सं. : 60

ज्योतिषीय टोटके व उपाय

चंदू बी. सोलंकी

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कई परेशानियां आती हैं। जिससे पार पाना ही जिंदगी का नाम है। परन्तु, कुछ परेशानियां ऐसी होती हैं जो आपको हैरान व परेशान करती हैं। इससे बचने के कुछ टोटके होते हैं। जिसे अपनाकर आप कुछ हद तक बाधाओं से मुक्ति पा सकते हैं।

शत्रु शमन के लिए: सूने कुएं पर मिट्टी के पके हुए दीपक, रात्रि के समय 2 दिनों तक लगातार जलाने से शत्रु शमन होता है। दीपक जलाते समय शत्रु का नाम लेकर अपनी अभिलाषा को मन ही मन कहा जाए तो वह अवश्य पूरी होती है। दीपक को साफ पानी से धो-पोंछकर उपयोग करना चाहिए। सरसों का तेल और आक की रुई की बत्ती बनाकर प्रयोग करना चाहिए। दीपक जलाने के बाद पलट कर न देखें। यदि अगले दिन कुएं पर दीपक गायब हो जाए तो चिंतित नहीं होना चाहिए।

स्थायी सुख-समृद्धि के लिए: पीपल के वृक्ष पर उसकी छाया में खड़े होकर जल चढ़ाना चाहिए। जल लोहे के पात्र से चढ़ाएं। जल में पहले दूध, घी और चीनी डालने चाहिए। फिर जल डालें। इस प्रयोग को शुक्ल पक्ष के प्रथम शनिवार से प्रारंभ करें और प्रतिदिन प्रात:काल स्नान के बाद, सर्वप्रथम पीपल के वृक्ष पर जल चढ़ाने का नियम बना लें। ऐसा करने से जीवन में चमत्कारिक रूप से मनचाहा लाभ प्राप्त होता है।

व्यवसाय में उन्नति के लिए: भगवान शिव का पूजन करें। सोमवार को शिव मंदिर जाकर दूध, जल शिवलिंग पर चढ़ाएं। 'ऊँ सोमेश्वराय नम:' का जप करते हुए तथा रुद्राक्ष से इस मंत्र की एक माला जाप करें। पूर्णमासी को जल में थोड़ा दूध मिलाकर चंद्रमा को अर्घ्य दें और अपने व्यवसाय की उन्नति के लिए प्रार्थना करें। चमत्कारी लाभ अनुभव करेंगे। यह अत्यंत दिव्य प्रयोग है।

जब काम में मन न लगे: यदि कार्यालय में काम करने का मन न होता हो, तो अपने सामने की दीवार पर बरगद के पेड़ का दृश्य लगाएं। इससे काम में मन लगेगा, उच्च पद की प्राप्ति भी होगी और स्नेह के पात्र बनेंगे। कन्या के शीघ्र विवाह हेतु : कन्या के घर वाले जब वर ढूंढने के लिए या वर पक्ष से बात तय करने के लिए घर से बाहर जाएं, तो उनके लौट आने तक कन्या अपने केशों को खोलकर रखे, न तो जूड़ा बनाए, न ही चोटी बनाए। बात की गोपनीयता बनाए रखना आवश्यक है।

ऋण से मुक्ति के लिए: ऋण मुक्ति के लिए चांदी का हाथी घर पर रखें। शुक्ल पक्ष के बुधवार को, सूर्य अस्त होने से पूर्व इसे रखें।

ऊपरी हवा से बचाव के लिए: दूध पीते ही या सफेद मिठाई खाते ही एकदम बाहर नहीं जाना चाहिए, विशेष कर चौराहे पर। इससे ऊपरी हवा की संभावना रहती है। दूध और सफेद मिठाई चंद्रमा के पर्याय है। चौराहे का अर्थ है दिग्भ्रम। दिग्भ्रम का अर्थ है राहु। सफेद चीज का सेवन करने से चंद्र को बल मिलता है। राहु और चंद्रमा शत्रु हैं। जब मनुष्य चौराहे में प्रवेश करता है, तो अच्छा भला होता हुआ भी, ऊपरी हवा से प्रभावित हो जाता है। कभी ऐसा हो, तो हनुमान चालीसा या बजरंग बाण का पाठ करें। ये सब अनिष्टों को दूर करते हैं।

वास्तु दोष दूर करने के लिए: यदि मुख्य द्वार का वास्तु दोष है, तो उसके निवारण हेतु चार छड़ों वाली पवन घंटी लटकाएं। इसे दरवाजे पर पर्दे के नजदीक इस प्रकार लगाएं कि द्वार में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों से टकरा कर मधुर ध्वनि बिखरे और नकरात्मक ऊर्जा निकल जाए।

दुर्भाग्य से बचने के लिए: दुकान, कार्यालय में मोर पंख लगाने चाहिए। ये नकारात्मक ऊर्जा को अपने अंदर समा लेते हैं। इनको घर में रखने से पड़ोसियों की नजर नहीं लगती। कम से कम 6 मोर पंख रखने चाहिए।

जानिए चन्द्र ग्रह को

मुरली कांठेड़

भारतीय ज्योतिष शास्त्र में चन्द्रमा यानि चन्द्र ग्रह का महत्वपूर्ण स्थान है। यह मन का कारक भी है। तांत्रिक ज्योतिष में तो यहां तक मान्यता है कि चन्द्रमा व पृथ्वी का संबंध माँ-बेटे के समान है। जैसे अपने बच्चे को देखकर माँ के दिल में हलचल शुरू हो जाती है, वैसे ही चन्द्रमा की गतिविधियों से पृथ्वी में स्थित सागरों में हलचल होने लगती है। ज्वारभाटा इसी बात का परिणाम है। चन्द्रमा को आधार मानकर कई कवियों ने रसीली कविताओं एवं गीतों का निर्माण किया है। चन्द्रमा की सुंदरता से मोहित होकर कवि गजलों एवं कविताओं का निर्माण करते हैं वहीं तांत्रिक चन्द्रमा की आकाशीय स्थितियों के अनुसार शक्तियां अर्जित करने की उपासना करते हैं। शरद पूर्णिमा का भी इस दृष्टि से बहुत ही महत्व है।

वैसे चन्द्र ग्रह समृद्धता, सुख व वैभव का कारक माना जाता है, लेकिन इसका उग्र रूप प्रलयकारी भी होता है। चन्द्रमा का आकर्षण, पृथ्वी पर भूकंप, तूफान, अतिवर्षा, भूस्खलन, ज्वारभाटा आदि लाता है। आकाश में पूर्ण चन्द्रमा की स्थिति में तांत्रिक सिद्धियां प्राप्त करने हेतु जुट जाते हैं। चन्द्रमा मन का राजा है। इसके पसंदीदा कार्य स्वर्णाभूषणों, शिक्षा व समृद्धि का व्यवसाय है। चन्द्रमा के प्रभाव से प्रकृति में विशेष हलचल होती है। चन्द्रमा के घर में शत्रु ग्रह भी बैठे हो तो वह अपना फल खराब नहीं करता है। चन्द्रमा की स्थिति से ही मनुष्य के मन व समुद्र में उठने वाली लहरों का निर्धारण होता है। मूत्र संबंधी रोग, दिमागी असंतुलन, तनाव, हृदयरोग आदि चन्द्रमा से संबंधित है।

लाल किताब के अनुसार चन्द्रमा शुभ व सौम्य ग्रह है। यह शीतल व सौम्य प्रकृति वाला है। ज्योतिष शास्त्र में इसे स्त्रीलिंग ग्रह के रूप में मानता है। भारतीय ज्योतिष में दैनिक, साप्ताहिक एवं मासिक भविष्यफल भी चन्द्रराशि के आधार पर बताये जाते हैं।

चन्द्रमा प्रेम का कारक भी है। नजदीकियां बढ़ना, टूटना, बिगड़ना, बिछड़ना ये सभी चन्द्रमा से प्रभावित है। चन्द्रमा स्वयं प्रेम का प्रतिबिंब है। प्राचीन मान्यताओं के अनुसार चन्द्रमा ने देवगुरु बृहस्पति की पत्नि तारा का अपहरण किया और उसके साथ भोग-विलास में रत रहा, जिससे बुध ग्रह की उत्पत्ति हुई। किसी के भी जीवन में प्रेम या भोग-विलास की प्रवृत्ति कुंडली में चन्द्रमा के प्रबल होने के कारण ही होती है। जातक की राशि उसके जन्म के समय चन्द्रमा की स्थिति से निर्धारित होती है।

जन्मकुंडली एवं ज्योति शास्त्र में चन्द्र ग्रह विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

-ए-56/ए, लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-110024

अध्यक्षीय

मनीष जैन

जिस तरह सात रंगों के इंद्रधनुष से आकाश की खूबसूरती में चार चांद लग जाते हैं, वैसे ही ध्यान के विविध प्रयोगों से जीवन की बगिया महक उठती है।

ध्यान है सुखद जीवन की यात्रा

आज के तनावभरे, घटनाबहुल एवं प्रतिस्पर्धा के युग में हर व्यक्ति जीवन में शांति चाहता है, शक्ति का विकास चाहता है और चेतना का ऊर्ध्वारोहण करना चाहता है। भारतीय संस्कृति में ध्यान और साधना के उपक्रम प्राचीन समय से प्रचलित है, जिनसे हम इन अलौकिक अनुभवों को प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान एक आध्यात्मिक पद्धति है, अंतिम लक्ष्य को पाने का उत्तम साधन है। ध्यान को जीया जा सकता है, ध्यान का अमृतपान पीया जा सकता है, अनुभूत किया जा सकता है पर शब्दों से ध्यान के रसास्वाद को बताया नहीं जा सकता, कागज में चित्र के रूप में चित्रित नहीं किया जा सकता, न ही किसी पदार्थ की तरह दिखाया जा सकता है। जब ध्यान किया जाता है तब इसका असली मधुर आस्वादन प्राप्त होता है। मेरी प्रारंभ से ही ध्यान में अभिरूचि रही है और इसके चमत्कारों से मैं रूबरू होता रहा हूँ।

मैने आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के सान्निध्य में अन्तर्राष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान शिविर में भाग लिया। शिविर में श्वासप्रेक्षा, श्वासदर्शन का सलक्ष्य प्रयोग करवाया। हम सभी ने इन प्रयोगों को गहनता से एवं गहराई के साथ किया। हमने एक अजीब परिवर्तन महसूस किया, ऐसा लगा जैसे हमारे मन, वचन, काया की प्रशस्त आध्यात्मिक चिकित्सा हुई हो। इन प्रयोगों से चित्त की एकाग्रता व समाधि में वृद्धि हुई, प्रयोग भी आत्मसात हुआ। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रेक्षाध्यान शिविर की वह मेरी यात्रा मेरे जीवन का एक सुखद अनुभव थी, जीवन को एक नयी दिशा और दृष्टि देने वाली थी। मेरी दृष्टि में ध्यान के ये प्रयोग मानव जीवन की सुखद यात्रा का सुंदर उपक्रम है। प्रतिदिन कुछ समय इन प्रयोगों के लिये नियोजित करने से हर व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से शक्तिशाली बन सकता है और अस्त-व्यस्त जीवन की पटरी से उतरकर स्वस्थ, मस्त व तंदुरुस्त जीवन की पटरी पर आकर अपनी जीवन यात्रा को सुखद बना सकता है। सर्वविदित है कि प्रेक्षाध्यान वैज्ञानिक और आध्यात्मिक पद्धति है, जिसका आविष्कार आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने सन् 1975 में किया। इस पद्धति में कायोत्सर्ग, दीर्घश्वास प्रेक्षा, शक्तिकेन्द्र प्रेक्षा, शांतिकेन्द्र प्रेक्षा, ज्योतिकेन्द्र प्रेक्षा, शरीर प्रेक्षा, लेश्याध्यान, अंतर्यात्रा, अनुप्रेक्षा इत्यादि अनेक आकर्षक व प्रभावशाली प्रयोग हैं और मैंने इन प्रयोगों का विलक्षण आनन्द शिविर के दौरान प्राप्त किया और उसके बाद से ये प्रयोग मेरी जीवनचर्या का अंग बन गये हैं।

जिस तरह सात रंगों के इन्द्रधनुष से आकाश की खूबसूरती में चार चांद लग जाते हैं, वैसे ही ध्यान के विविध प्रयोग से जीवन की बगिया महक उठती है। खुशियों की तलाश से भरे इस सफर में कुछ भी अधूरा नहीं रहता। कभी दूसरों की खुशियों की लहर आपके दिल में भी खुशियां जगा जाती है तो कभी किसी खास व्यक्ति का अपनापन और साथ। बस इस सुखद अनुभूति के लिये आपका मन और तन ध्यानमय होना जरूरी है। ध्याान के संबंध में यह तथ्य विशेष महत्व का नहीं है कि यह कितनी देर तक किया जाता है बल्कि महत्व इस बात का है कि आप जितनी देर भी ध्यान में रहे, मुकम्मल तरीके से साथ रहे। ऐसा करके ही हम जिन्दगी के पार भी देख सकते हैं, भारी पहाड़ों को भी लांघ सकते हैं, वक्त से जूझ सकते हैं और जिन्दगी की दिशा में नए-नए रास्ते तलाश सकते हैं।

तनावमुक्त जीवन सबको पसंद है। ध्यान के प्रयोग न केवल शक्ति का ऊर्ध्वारोहण करते हैं अपितु जीवन को तनाव मुक्त करते है। मानव शरीर में अनेक तंत्र हैं। उनमें तंत्रिका तंत्र महत्वपूर्ण है। यह मस्तिष्क और सुषुम्ना इन दो मुख्य अवयवों से बना है। हमारी शक्ति सुषुम्ना पथ से होती हुई मस्तिष्क में ज्ञानकेन्द्र तक पहुंचती है, तब सुषुम्ना और मस्तिष्क के प्रत्येक न्यूरोन्स इस शक्ति केन्द्र से प्रभावित होते हैं। जैसे बहता हुआ झरने का पानी स्वच्छ और निर्मल होता है ठीक वैसे ही ऊपर की ओर बहने वाला शक्ति स्रोत भी मस्तिष्क में स्थित सभी प्रकार के कुंठाओं रूपी कचरे को बाहर निकालकर मस्तिष्क को तरोताजा और स्वच्छ बनाए रखता है। यह हकीकत है कि जिस व्यक्ति का मस्तिष्क चेतना शक्ति से भरा है उसे किसी प्रकार के तनाव का सामना नहीं करना पड़ता। क्योंकि वह इंसान हर कार्य को विवेकपूर्वक करता है, उसकी निर्णयशक्ति सशक्त होती है।

ध्यान से शक्ति का जागरण होता है। भगवान महावीर ने कहा–''मानव अनंत शक्ति संपन्न है।'' पर इसका बोध मानव को नहीं है। विज्ञान ने अन्वेषण कर बताया–दुनिया में जितने महापुरुष बने हैं, अच्छे-अच्छे पंडित विद्वान बन रहे हैं, वे मुश्किल से अपनी 7 या 8 प्रतिशत शक्ति का इस्तेमाल करते हैं। यदि वे अपनी शक्ति को और जगा दें, तो पता नहीं वे क्या से क्या बन सकते हैं और इसके लिये ध्यान का आलम्बन ही कारगर है। इसी से मानव अपने भीतर की शक्ति जगाकर अंतर्दृष्टि को जागृत कर सकता है। हर व्यक्ति के लिये यह जानना जरूरी है कि शक्ति के स्रोत को कैसे जगाए? और मानव में शक्ति का भंडार कहां पर स्थित है। ध्यान के माध्यम से 'शक्तिकेन्द्र' को जागृत किया जाता है।

इस संदर्भ में यह भी जान लेना चाहिए कि शक्ति का प्रवाह नीचे की ओर प्रवाहित होने से और ऊपर की ओर प्रवाहित होने से मानव जीवन पर क्या असर पड़ता है। कहा जाता है कि जिसकी शक्ति नीचे की ओर जाती है उस व्यक्ति को निषेधात्मक विचार ज्यादा सताते हैं। वह व्यक्ति क्रूर, हिंसक वृत्ति वाला बनता है, काम-भोगों में आसक्त रहता है। इसके विपरीत जिसकी शक्ति ऊपर की ओर अर्थात् मस्तिष्क की दिशा में जाती है वह व्यक्ति रचनात्मक कार्यों में प्रवृत्त रहता है, उसकी आध्यात्मिक शक्ति का जागरण होता है, विधेयात्मक विचारों से मस्तिष्क सदा तरोताजा रहता है। सद्गुणों का विकास, धर्म के प्रति रुचि, सहज जागरूकता, एकाग्रता एवं सात्विक गुणों का प्रादुर्भाव होता है।

हमारे मस्तिष्क के चारों ओर एक आभावलय है जिसे 'ओरा' आभामंडल कहा जाता है। ध्यान के प्रयोग से वह सर्वाधिक प्रभावित होता है। आभामंडल से जो तरंगे निकलती हैं, वे तरंगे शक्तिशाली होती हैं जो हमारे आसपास के वातावरण को और हमारे संपर्क में आनेवाले व्यक्तियों को प्रभावित करती हैं, इसके साथ-साथ हमारी इच्छा शक्ति भी स्वत: ऊर्जा से परिपूर्ण बन जाती है। विशेष रूप से हमारा हाइपोथेलेमस जो शांति केंद्र का स्थान है वहां एण्डोरफिन और सेरोटोनीन पर्याप्त मात्रा में स्रावित होते हैं जो हमारे भीतर नया उत्साह और नई स्फूर्ति पैदा करते हैं। ■

एक अभिनव आदिवासी शिक्षा एवं जन कल्याण का विशिष्ट उपक्रम

गुजरात सरकार के सौजन्य से सुखी परिवार फाउण्डेशन द्वारा संचालित

एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय, कवांट

सुखी परिवार फाउंडेशन अपने विविध स्वस्थ, सुखी एवं समृद्ध समाज निर्माण के कार्यक्रमों में जोड़ रहा है एक अनूठी आदिवासी शैक्षणिक गतिविधि को। एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय आदिवासी जनजीवन को विकास के पथ पर अग्रसर करने की एक बहुआयामी योजना है। आपका सहयोग है स्वस्थ समाज निर्माण का आधार। अपनी विशाल और बहुउद्देशीय विद्यालय की योजना के साथ सुखी परिवार फाउंडेशन आपके सम्मुख है। सहयोग के लिए आगे बढ़े।

विद्यालय भवन के कमरों के सौजन्यदाता बनें

आपका सहयोग : समाज की प्रगति

SUKHI PARIVAR FOUNDATION

Head Office :
T. S. R. Center, A-4/38, Road No.-1, Mahipalpur Chowk, New Delhi-110 037
Phone : 011-26782606, 26782637, Mo: 9810011133

Delhi Office :
48, South Avenue, New Delhi - 110001

Kawat Office :
1, Abhay Raj Colony, Behind Parawala Building, P.O. Kawat-391179
Dist. Baroda (Gujrat) Mob. No.: 9879625013, 9662574920

Website : www.sukhiparivar.com
E-mail : info@sukhiparivar.com

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
November 2011

Nahar

SPINNING MILLS LTD.
OSWAL WOOLEN MILL EXPORTS
& O.W.M. WOOL COMBERS

(Recognised Trading House)

Manufacturers & Exporters of

HIGH CLASS WOOLEN, COTTON
HOSIERY, KNITWEARS & TEXTILES

Nahar Spinning Mills Ltd.

Nahar Tower, 373, Industrial Area-A, Ludhiana-141003

E-mail: oswal@owmnahar.com

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092